MOTIONS *RE*

I. THE REPORT OF THE EDUCATION COMMISSION (1964—66)

II. THE REPORT (1967) OF COMMITTEE OF MEMBERS OF PARLIAMENT ON EDUCATION—*contd.*

THE DEPUTY CHAIRMAN: May I request that all Members will keep themselves within the time limit of ten minutes so that the Minister can reply at 2.30? There is no lunch hour today. Prof. Siddhantalankar.

प्रोफेसर रत्नव्रत सिद्धन्तालंकार (नामनिर्देशित) : उपसभापति महोदया, यह देश का दुर्भाग्य है कि आज 20 वर्ष के बाद, इसके बावजूद कि हम एक दूसरे के निकट थे, हम एक दूसरे से दूर होते चले जा रहे हैं। आज भाषा के सम्बन्ध में जो विवाद उठ खडा हुआ है वह इस बात का सूचक है कि हम एक दूसरे के निकट नहीं आ रहे, दिनोंदिनों एक दूसरे से दूर होते चले जा रहे हैं। जब तक अंग्रेजी भारतवर्ष के अंदर रही, अंग्रेजी ने तो शायद हमें एक बनाने का प्रयत्न किया और मैकाले ने शायद बहुत अच्छा किया जब उसने यह घोषित किया और इस देश के अंदर अंग्रेजी भाषा को उसने लादा। लेकिन हमने अपने ऊपर अंग्रेजी लदवा ली और लदवाने का परिणाम यह अवश्य हुआ कि यह देश छिन्नभिन्न होने के बजाय एक हुआ। परन्तु प्रश्न यह है कि क्या वर्तमान परिस्थिति में और जैसी अवस्थाए इतिहास ने उत्पन्न कर दी है उसमें इस देश को एक करने वाली यह अंग्रेजी भाषा टिक सकती है या नहीं टिक सकती है। अगर यह टिक सके तब तो दूसरी बात हैं। लेकिन 1964 में इस देश के अंदर 46 करोड़ 85 लाख व्यक्ति थे और इस देश के अंदर एक करोड़ व्यक्ति प्रतिवर्ष बढ़ रहे है। आज लगभग 50 करोड़ व्यक्ति जो इस देश के अंदर हो गये हैं उन 50 करोड़ व्यक्तियों में से कुल 2 प्रतिशत व्यक्ति ऐसे हैं जिन्होंने माध्यमिक शिक्षा ली है या उच्च शिक्षा ली है। सो 2 प्रतिशत ऐसे हैं जो कि अंग्रेजी का ज्ञान रखते हैं। प्रश्न यह है कि क्या यह दो प्रतिशत व्यक्ति भारतवर्ष के प्रतिनिधि हैं और क्या इन दो प्रतिशत व्यक्तियों के आधार पर हम इस देश को एक कर सकते हैं? समुद्र में से बूंद उठी और उसने कहा कि मैं समुद्र हू समुद्र का और बूंद का झगड़ा हैं। क्या समुद्र समुद्र है या बूंद समुद्र है? यह दो प्रतिशत व्यक्ति जो समुद्र के अंदर बूंद के समान है ने आ टिक नही सकते, हम कितना ही प्रयत्न करें, कितनी ही कोशिश करें क्योंकि इतिहास का वेग ऐसा बढ़ता चला आ रहा है कि हमारे किये भी अब अंग्रेजी टिक नही सकती। इसमें शक नही कि अंग्रेजी ने देश को एक नाया लेकिन इसमें भी शक नहीं है कि इस समय जो भी परिस्थितियां उत्पन्न हो गई है उन परिस्थितियो में अंग्रेजी टिकने वाली नहीं है चाहे कितना ही प्रयत्न किया जाय, चाहे सारा मद्रास उठ खड़ा हो, चाहे सारा बंगाल उठ खड़ा हो। जो वस्तुस्थिति है उससे आख मूंद नहीं सकते और अगर ऐसी बात है तो हमारे सामने रास्ता क्या रह जाता है? रास्ता सिर्फ वह रह जाता हैं जो कि आपके सामने शिक्षा मंत्री ने रखा। शिक्षा मंत्री ने यह रास्ता रखा है कि देश के अंदर जितनी भाषाए हैं, उन सब को खुली छूट दे दो। ठीक ऐसा ही रास्ता कि जैसे यहां पर जितने व्यक्ति हैं वे बोलने के लिये उठ खड़े हो जाय तो सभापति जी के हाथ में कुछ नही रहता और वे बोलते ही चले जायेंगे। यह जो रास्ता शिक्षा मंत्री ने रखा है यह एक लाचारी का रास्ता है। इस रास्ते का नतीजा यह होगा कि आज तो अंग्रेजी के कारण देश के अन्दर एकता दिखलाई देती है लेकिन क्षेत्रीय भाषाओं के हो जाने से और उनको स्वीकार करने का परिणाम यह होगा कि सारा देश खंड खंड हो जायेगा। मद्रास में तामिल पढ़ाई जायेगी, बंगाल में बंगाली पढ़ाई जायेगी और इस तरह से 14 भाषाए अलग अलग प्रदेशों में पढ़ाई जायेंगी। इसका नतीजा

यह होगा कि जब 14 भाषाई लोग इक्ट्ठा होकर बैठेंगे तो वे लोग एक दूसरे को नहीं समझ सकेंगे। तो मैं सिर्फ आप से यह कहना चाहता हूं कि आज हमारे जो शिक्षा मंत्री जी हैं उन्होंने देश को एकता के रास्ते पर नहीं डाला है उन्होंने देश को खंडता के रास्ते पर डाला है। आज 100 साल बाद भी, जिस मैकाले के बाद आज हम यहां पर बैठे हैं अंग्रेजी में एक दूसरे की बातों को समझते हैं। ये 14 भाषाएं टिक नहीं सकती हैं। इसका परिणाम यह होगा कि उनके अन्दर संघर्ष होगा और जो बलवती भाषा होगी वह अपने आप ऊपर आ जायेगी तथा राष्ट्रीय भाषा का स्थान ग्रहण करेगी। मैं यह नहीं कहता हूं कि वह कौन सी भाषा आयेगी। अगर हिन्दी के अन्दर बल होगा समर्थता होगी तो हिन्दी के अन्दर ऐसे लेखक उत्पन्न हो जायेंगे जो हिन्दी को आगे बढ़ा सकेंगे और हिन्दी की तरक्की तथा उसको उन्नत कर सकेंगे। अगर हिन्दी के अन्दर समर्थता नहीं होगी तो वह ऊपर नहीं उठ सकेगी क्योंकि भाषा विचारकों से ही उत्पन्न होती है। शेक्सपीयर ने अंग्रेजी को बनाया। अंग्रेजी ऐसे ही उत्पन्न नहीं हो गई। प्रत्येक भाषा के अन्दर इस तरह की शक्ति होती है और उस शक्ति को उसके लेखक अपने विचारों से जनता के सामने रखते हैं। अगर हिन्दी के अन्दर बल होगा तो वह राष्ट्र भाषा का रूप ग्रहण करेगी अगर बंगला भाषा में समर्थता होगी तो वह राष्ट्र भाषा का स्थान ग्रहण करेगी। लेकिन आज जिस तरह अंग्रेजी सारे देश को एक करने वाली है 100 साल के बाद भी एक ऐसी भाषा हमारे सामने जरूर आ जायेगी। जो कि सारे देश को एक करने वाली होगी। उस समय हमारे यहां से शिक्षा मंत्री नहीं होंगे दूसरे शिक्षा मंत्री होंगे। एक ऐसे शिक्षा मंत्री होंगे जो कि सारे देश को एक करने के लिए एक भाषा बनायेंगे। उस समय 100 साल के बाद क्या अवस्था होगी ? जो हमारे यहां कुर्सी पर इस समय सभानेत्री जी बैठी है उनकी जगह पर अगर कोई सभानेत्री होंगी तो वे बैठेंगी और अगर सभापति जी होंगे तो वे बैठेंगे। वे उस समय अंग्रेजी में नहीं बोलेंगे वे उस भाषा में बोलेंगे जो मेरे ख्याल में हिन्दी भाषा होगी। लेकिन अगर आपकी कोई दूसरी भाषा होगी तो भारतवर्ष की कोई राष्ट्रीय भाषा जरूर होगी क्योंकि यह राष्ट्र स्वतन्त्र हुआ है वैसे ही खेल से स्वतंत्र नहीं हुआ है। इस देश के अन्दर एकता आने वाली है और जो हम लोग यहां पर बैठे हैं उनकी जगहों पर इसी सभा भवन के अन्दर जो उस समय पार्लियामेंट के सदस्य होंगे वे यहां पर बैठेंगे और गैलरीज में हमारी आत्मा बैठी होंगी। यहां पर उस समय जो व्यक्ति होगा वह हिन्दी में भाषण करेगा। वह कह रहा होगा कि हमारे पूर्वज किस तरह से पहले यहां पर अंग्रेजी में बोलते थे जो कि अब चले गये है। वे लोग अंग्रेजों के कोट पतलून पहनते थे और उन्हीं की भाषा में बोलते थे। इस तरह की तसवीर वे लोग हमारी खीचेंगे। इस प्रकार का वह दृश्य होगा।

तो मैं यह कहना चाहता हूं कि आज हमारे शिक्षा मंत्री जी ने जो स्थिति रखी है उसका परिणाम यह होने वाला है कि देश के अन्दर घमासान मच जायेगा ऐसा घमासान मचेगा, ऐसा संघर्ष मचेगा कि जो भाषा सब से बलवती होगी वही राष्ट्रभाषा के रूप में निकलेगी। इस तरह से हमारी भाषाओं में संघर्ष की स्थिति पैदा कर दी गई है और इस संघर्ष में जो भी भाषा निकलेगी चाहे वह कोई भी भाषा हो वह भारतवर्ष को एक सूत्र में जोडेगी और इसके वगैर भारतवर्ष तरक्की नहीं कर सकता है।

श्री लोकनाथ मिश्र (उड़ीसा) : ऐसी भाषा संस्कृत को बना दीजिये।

प्रो० सत्यव्रत सिद्धांतालंकार : संस्कृत को बनाइये या किसी भाषा को बनाइये, मैं किसी भाषा का यहां पर नाम नहीं लेना चाहता हूं। मेरा कहना तो सिर्फ यह है कि राष्ट्र एक होकर रहेगा और इस तरह से 14 भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करके हम इस संसद में एक

[श्री सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार]

दूसरे की बात नहीं समझ सकते हैं। (*Interruptions*) यहां पर अगर मैकाले की आत्मा होती तो जिस तरह से उसने अंग्रेजी भाषा को यहां दिया था वहां पर वह हिन्दी भाषा को भी आज के युग को देख कर इस देश को देता।

आप कहते है कि इससे हिन्दी वालो को लाभ होगा। एक तरफ तो देश का प्रश्न है और दूसरी तरफ आप छोटी छोटी लाभ की बात करते है। क्या आप राष्ट्र के लिए छोटी छोटी बातो को नही छोड सकते है ? अगर आप छोटे छोटे लाभ की बाते कहते हैं तो मैं यह निवेदन करना चाहता हू मद्रासी जो अच्छी अंग्रेजी बोलता है अगर उसको यह मालूम हो जाय कि हिन्दी के ज्ञान से नौकरी मिलती है तो वह हम सब लोगो से अच्छी हिन्दी बोलने लगेगा क्योंकि उनके अन्दर भाषा बोलने की समर्थता है उनके अन्दर एक शक्ति है। इस तरह से भाषा अपने आप शक्ति ग्रहण करती है।

(*Interruptions*)

श्री लोकनाथ मिश्र : आपने इसके बारे मे कोई सल्यूशन नही दिया।

प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार : मैं इसके बारे मे इस समय कुछ नहीं कहना चाहता हू क्योंकि आपका दिमाग इस समय गरम है। मै अब पास पड़ोस की पाठशाला के सबध मे कुछ कहना चाहता हू। सब से पहले यह शब्द, जैसा कि आपने पब्लिक स्कूल का शब्द योरूप से लिया है, शायद यह नेबरहुड शब्द भी आप योरूप से ले आये है।

एक माननीय सदस्य : रूस से आया है।

प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार : कैसे यह नेबरहुड स्कूल का शब्द आप लाये हैं, मै नही कह सकता हू कि आप रूस से लाये। अगर आप वहा से लाये तो बहुत अच्छा है। जिस तरह से पब्लिक स्कूल शब्द बाहर से ले आये है, वैसे ही नेबरहुड स्कूल भी बाहर से लाये है। (*Interruptions*) आपको चाहे चीन से मिला, रशिया से मिला, इग्लैंड से मिला या वहा और से मिला। लेकिन मेरा कहना यह है कि आपने यहा की चीज क्यो नहीं ली ? भारत वर्ष के अन्दर अपना सस्कृति थी, भारतवर्ष के अन्दर अपनी शिक्षा व्यवस्था था। मै आपको बतलाना चाहता हू कि यहा पर पहले गुरूकुल प्रणाली व्यवस्था थी गुरूकुल शब्द मे एक आदर्श है। नेबरहुड का मतलब, शायद आप पास पडोस के स्कूल से लगाना चाहते है परन्तु इसमे कहा पर आदर्श है पास पड़ोस मे कही कोई आदर्श की बात नही आती है। गोल्फ लिंक मे पास पडोस की बात कैसे होगी ? जो लोग झोपडियो मे रहते है क्या वे पास पडोस के पब्लिक स्कूलो मे गोल्फ लिंक के बच्चो के साथ पढेंगे ? क्या इस तरह से एकता उनमे होगी ? इस तरह से तो भिन्नता ही पैदा होगी। एक लडका, अमीरो की तरह जायेगा और एक लडका गरीबी की हालत मे जायेगा। आपने इस समय जो व्यवस्था कायम की हुई है, उसके अन्दर समाजवाद आने वाला नही है क्योंकि समाजवाद तब ही आ आ सकता है जबकि सारा देश समाजवाद के अन्दर रग जाय। जहा पर महल है, जहा पर बडे बडा दो लाख का कोठिया है, वहा पर नेबरहुड कैसे होगा ? जहा पर झोपडिया है, वहा पर नेबरहुड के स्कूल कैसे होंगे ? आपके यहा इतनी भाषाये है, आप सबके अन्दर समानता पहले लाइये। जब आप इस बात पर समानता नही ला सकते है, तो फिर नेबरहुड के अन्दर किस तरह से समानता ला सकते है क्योंकि वहा पर कोई वर्मा होगा, कोई अरोडा होगा, कोई शर्मा होगा, कोई कपूर होगा।

एक **माननीय सदस्य** : अकबर अली-खान साहब भी होंगे ।

प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार : तो हमारे अन्दर जो जाति व्यवस्था का भेद-भाव है, वह इतना घर कर गया है कि आप उन भेदों से ऊपर नहीं उठ सकते हैं । जो आप के बच्चे इन स्कूलों के अन्दर जायेंगे, उनके अंदर समाजवाद कहां से आयेगा क्योंकि वहां पर कोई बच्चा अरोड़ा होगा, दूसरा बच्चा कपूर होगा, तीसरा गुप्ता होगा और घोष साहब होंगे जो अपने को कम्युनिस्ट कहते हैं । कैसे कहते हैं ये अपने को घोष, क्योंकि वे तो किसी जाति को नहीं मानते हैं, किसी धर्म को नहीं मानते हैं और न हीं किसी चीज को मानते हैं । वे अपने को घोष जरूर घोषित करते हैं । अगर आप समाजवादी व्यवस्था लाना चाहते हैं, तो आपको यह नियम बनाना होगा कि इन पाठशालाओं के अन्दर वे ही आयें जो कि जात पात पर विश्वास नहीं करते हैं । कल गंगा बाबू ने कहा था कि इन स्कूलों में बच्चे जो हैं वे पैदल भी आयेंगे और मोटरों में नहीं आयेंगे । मैं तो समझता हूं कि जो अमीर हैं वे बच्चे तो मोटरों में आयेंगे और जो गरीब बच्चे हैं वे बेचारे पैदल आयेंगे । अगर आप इनसे मोटर छीन लेते हैं तो दूसरी बात है । लेकिन मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि ऐसा व्यवस्था क्या जिसमें इन स्कूलों द्वारा समाजवाद उत्पन्न न हो । मैं आप से कहना चाहता हूं कि भारतवर्ष में गुरूकुल की व्यवस्था थी । गुरूकुल का यह मतलब नहीं है कि वहां पर लोगों का सन्यासी बनाया जाय । प्राचीन काल में जो गुरूकुल थे उनमें गरीब और अमीर दोनों के बच्चे पढ़ते थे । लेकिन गुरूकुल में जाकर उनको पता नहीं होता था कि यह किस जाति का और वह किस जाति का है । वहां पर ऊंचे से ऊंचे और नीचे से नीचे घराने के बच्चे पढ़ते थे और सब एक तरह से रहते थे । इस प्रकार का उन गुरूकुलों में व्यवस्था थी । उसका कुछ झलक कहीं कहीं पर आज भी दिखलाई देता है । आप जो नेबरहुड स्कूल खोलना चाहते हैं उनको आप खोलें, मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है । लेकिन मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि इसके साथ ही साथ आपको गुरूकुल भी खोलने चाहियें और इन गुरूकुलों को एक आदर्श रूप देना चाहिये जिससे उनको देखकर जितनी भी दूसरी संस्थायें हैं, वे अपना आदर्श कायम कर सकें । इन गुरूकुलों के अन्दर जो शिक्षा व्यवस्था है, उसके बारे में विनोबा भावे जी ने कहा है कि इनमें स्प्रिचुअलिटी और साइन्स, दोनों तरह का वातावरण है ।

इस प्रकार के गुरूकुलों की स्थापना आप करेंगे तब तो आप शिक्षा के अन्दर एक नया कदम उठायेंगे । शिक्षा आयोग ने कहा कि शिक्षा के अन्दर एक रेवोल्यूशन होना चाहिये । क्या रेवोल्यूशन होना चाहिये । क्या यही क्रांति आपने उत्पन्न की कि नेबरहुड स्कूल खोल दिये । क्रांति तो तब होगी जब आप विचारों के अन्दर क्रांति करने वाले व्यक्ति उत्पन्न करें ।

दूसरी बात मैं एक छोटी सी कह कर के अपना भाषण समाप्त कर दूंगा । आपने यह कहा कि हम संस्कृति के अन्दर बच्चों को पालना चाहते हैं । लेकिन संस्कृति के लिये आप कर क्या रहे हैं ? अभी एक सांस्कृतिक मिशन जा रहा है रूसके अन्दर । कौन लोग हैं उस सांस्कृतिक मिशन के अन्दर । नाचने गाने वाले । यह मैं एक मोटी बात कहता हूं कि वे बड़ी ऊंची तरह से नाचते होंगे बड़ा ऊंचा गाते होंगे । *(Interruptions)*

श्री अर्जुन अरोड़ा (उत्तर प्रदेश) : वह गवर्नमेंट ने नहीं भेजा है ।

प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार : गवर्नमेंट भी जो भेजती है वह ऐसे ही भेजती है । गवर्नमेंट इस प्रकार के मिशन नहीं भेजती जो कि वहां जाकर के यहां की सभ्यता और संस्कृति बतला सकें । अभी मेरे पास एक रशियन बुलेटिन आया है उसमें लेनिन ने बतलाया है कि कल्चर क्या है । हम क्या कल्चर भेज रहे हैं ? नाचने गाने वाली । रशियन कहते हैं कि कल्चर, संस्कृति उच्च विचारों का नाम है । क्या अब भारत के पास कोई ऐसे उच्च विचार नहीं हैं जिन विचारों को लेकर के आप योरूप के अन्दर जाकर के बतला सकें कि यह है भारतीय संस्कृति । मैं आपसे यह कहूंगा कि यदि संस्कृति के विषय में आप कुछ भी कर रहे हैं तो ऐसे व्यक्तियों को आपको विदेशों में भेजना चाहिये जो भारत की विचार धारा को वहां पर दे सकें और उनको समझा सकें कि हमारी गीता के अन्दर क्या लिखा है उपनिषदों में क्या लिखा है ।

अन्त में मैं एक छोटी सी बात कह कर के समाप्त करूंगा । रिसर्च के विषय में आपने बड़ी बातें कहीं । लेकिन रिसर्च के लिये अगर भारतीय रिसर्च कोई हो सकती है तो वह संस्कृत के आधार पर हो सकती है । संस्कृत के लिये एक डिक्शनरी शिक्षा मंत्रालय को प्रकाशित करनी चाहिये और वह डिक्शनरी ऐसी होनी चाहिये जो कि संस्कृत ओरिएंटेड डिक्शनरी हो । आप जानते हैं कि जो अंग्रेजी भाषा है वह लैटिन और ग्रीक भाषाओं से निकली है और जितनी बड़ी बड़ी डिक्शनरियां हैं उनके अन्दर ग्रीक और लैटिन के जो डेरीवेटिव्ज हैं, रूट हैं वे दिये हुये हैं और उन रूट्स को आप संस्कृत के अन्दर भी परिणित कर सकते हैं । उदाहरण के लिये (involve) है 'Devolve' है 'Revolve' है 'Evolve' है । इनके अन्दर 'Volv root है । 'Volv' का मतलब है 'to turn' संस्कृत के अन्दर "वल्व" संवरण धातु है और इसका मतलब यही है । तो जितने शब्द हैं वे वल्व संवरण से निकल सकते हैं । इसलिये आप ऐसी एक डिक्शनरी तैयार कीजिये जिस में संस्कृत का जो रूट है वह आप दें सकें । इसी प्रकार 'Revive' है 'Survive' है । "जीव" शब्द संस्कृत का है । जीव" 'दिवा' दोनों एक शब्द हैं हैं जिस में से यह Revive और Svrvive इत्यादि शब्द निकले हैं ।

श्री महेश्वर नाथ कौल (नाम निर्देशित): ऐसी डिक्शनरी है नहीं ?

प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार : ऐसी डिक्शनरी कोई नहीं है । ':Juvenile' युवा शब्द से बना है । इसी तरह से 'Rejuvenation' है । ये जितने शब्द हैं वे संस्कृत के आधार पर बने हैं । अगर आप डिक्शनरी उठा करके देखें तो आप को कम से कम 90 प्रतिशत ऐसे शब्द मिलेंगे जिन का आधार संस्कृत है । तो एक ऐसी डिक्शनरी शिक्षा मंत्रालय को तैयार करनी चाहिये जो कि संस्कृत ओरिएटेड हो । मैंने पिछले दिनों इस बात पर ध्यान दिलवाया था और इतना ही नहीं मैंने शिक्षा मंत्रालय को गुरुकुल की तरफ से एक प्रस्ताव भेजा था कि इस प्रकार की डिक्शनरी बननी चाहिये । श्री चागला ने कहा था कि हां मेरे पास प्रस्ताव भेजिये तो मैं कुछ करूंगा । लेकिन जैसा कि मैंने कहा कि बहुत सी बातें कही जाती हैं लेकिन की नहीं जाती हैं । अगर आप इन बातों को करेंगे तो अपने देश की विचारधारा को आप उन्नत कर सकगे ।

अपना भाषण समाप्त करते हुये मैं सिर्फ एक ही बात कहना चाहता हूं कि जितने परिवर्तन हों उन परिवर्तनों से देश

उन्नति करे और पीछे की तरफ न जाय सा कि टेनिसन ने कहा है :

"The old order changeth yielding place to new,

And God fulfils Himself in many ways,

Lest one good custom should corrupt the world."

पूराणमित्येव न साधु सर्वम
न चापि नूनं नवमित्यवद्यम् ।
सन्तः परीक्ष्यान्यतरत् भजन्ते,
मूढ़ पर प्रत्ययनेय बुद्धिः ॥

जो पुरानी बातें हैं सिर्फ उन्हीं से आप न चिपके रहिये कि अंग्रेजी हो, अंग्रेजी हो, अंग्रेजी के बगैर हम जी नहीं सकते । यह पुरानी बात हो गई है । अब आप नई बातों की तरफ आइये । अगर आप को भाषा बदलनी पड़े तो भाषा को बदलिये । अगर आप इन स्कूल कालेजों को बदल कर गरूकुल बनाना चाहें तो उनको बनाइये लेकिन आगें बढ़िये और जो पुरानी बातें हैं उनसे चिपके रह कर अपनी संस्कृति को नष्ट मत करिये ।

SHRI GHULAM NABI UNTOO (Jammu and Kashmir): Madam Deputy Chairman, much has been said in this House about one aspect of the education, that is, the language. Proper it would have been that Members would have expressed these views when the Bill for language would have been presented. May I submit, Madam, that the nucleus of education in every country depends upon four pillars—teachers, taught, medium of instruction and the place of instruction. I would humbly submit about the plight of these four pillars in our country at present.

Madam, ours is a country where 500 million people live and it is a matter of surprise that 50 per cent. of them are below 18 years of age. It has been rightly said that it is a land of youth. It is a land where the fate of the country will be shaped in her class-rooms. Madam, the number of teachers in our country is 2 millions. And what is the fate of these teachers? Prof. Humayun Kabir has rightly said of such a teacher. I quote:—

> "It is this rejected, the misfit and the disappointed who often crowd this profession and stay there against their will because they have nowhere else to go".

He is an object of disregard in the society. The same Professor says:—

> "Teacher—is the symptom of disregard because our society tends to measure everything in material terms."

Now, the second pillar of education is the student. Madam, the number of students in our country at present is 70 millions and within a twenty-year time it will rise to 170 millions which is the population of Europe at present. Madam, the position of students in our country is that of indiscipline, frustration, lack of amenities. We have to shape our education policy keeping in view all these factors.

Madam, our third pillar is the school. We have 50,000 institutions in our country, and everybody knows that every school of ours, particularly with primary classes, is ill-fed, ill-equipped, with no playground and no accommodation. Generally we have only one teacher to teach the whole class during the day.

The fourth pillar, Madam, is the medium of instruction, the language. If there is any controversy at present in our country, it is over the medium of instruction. In this context we have to see the policy that we are going to frame so that we can base our education on that. That is, the policy, that we are going to frame for our education should be in accordance with our life with our needs and with the aspirations of the people. And

[Shri Ghulam Nabi Untoo.]

the goals we have to achieve through this education is production, social and economic development and thirdly building up the character of the country through education. Therefore, Madam, we have to see how we can achieve these goals. The first and the fundamental thing that we must have in the country to achieve every goal, and particularly that of education, is that we must have very competent, very capable, austere and dedicated leadership. Madam, the present situation in our country is that more than 70 per cent of the population is below 35 years of age. Therefore, we have to see that such leadership develops in the country which will truly inspire those younger people. We have to frame such a policy that in the Education Department, in the country, in the Government and in the public institutions like the legislature and the Parliament, will give such an inspiration to the people and people representing them should be able to express those aspirations of the people. It will be difficult to implement all the recommendations that the Education Commission has given us in its very valuable and illuminating report. For that what we require is money. And that money cannot come unless we steer our education policy to the first thing, namely, production. Madam, our country being an agricultural country, we have to consider as to how we can improve our agriculture and how we can utilise our education for better and more production. Madam, for that, we have to lay every emphasis or even the sole emphasis on such colleges and such research that have a bearing on agriculture. That is the only way by which we can implement the true spirit of this education policy and we can have more money so that the other aspects of the policy can also be truly implemented. Madam, we have to build up the most important pillar for implementing the education policy, that is, the teacher. I have just now spoken about the fate of the teacher at present. Therefore, while implementing the education policy, we should be conscious of the fact that we cannot achieve the results envisaged by the Education Commission unless we create an atmosphere for our teacher in which his status in the soicety is such as it was 50 years ago, when the teacher was respected as a *guru*. This cannot be done unless we provide him all material facilities and make him a privileged class of the socity so that the talent of the country is attached to this profession. If we do not provide adequate facilities to the teachers—and this to my mind appears to be the most frustrating element of our society—we will not be able to achive better results by implementing the education policy.

The third important aspect of this education policy is language. As far as language is concerned, we should not take up an attitude of imposition, because ours is a country where various languages are being spoken. We should allow every language of every region to develop and stand on its own legs. We should protect and encourage every language in our country so that a time will come when all the languages will co-exist and a better and superior language will come out which can claim to dominate the entire national scene. We should not impose any restriction of time. It is not by shifting from one language to another that we can achieve better results. As far as the present situation is concerned, Madam, in Northern India Hindi is being spoken everywhere and next comes Urdu. So Government should see that Urdu gets its proper status in Northern India next to Hindi. As far as the educational institutions, particularly the universities, are concerned, I would humbly submit to the Education Minister that a policy of granting autonomy to these institutions should be followed and the executive should have no hand in them.

Then as far as the neighbourhood schools are concerned, I would submit that it is not out of some privilege that our public schools are existing. Our Government schools are so ill-equipped and so ill-staffed that people

are forced to create such schools where better education can be given to the students. Unless we develop all our Government schools to a level where better education canbe given, there should be no obligation on the citizens of the country that they should send their boys to the neighbourhood schools. Thanks you.

SHRI P. C. MITRA (Bihar): Madam Deputy Chairman, we are experimenting with education for several years. This is another report that has come and we are going to try to make another experiment. Actually I feel that we are having more or less an academic discussion because the Union Government has very little power over the States to enforce their own system. Now also, I know that there is no uniform standard or curriculum of education. In certain States, English has become optional. In certain States, students who have failed in English are being promoted. Thus, thre is no uniform system of education all over the country. I find that this report of the Committee has tried to give their own recommendations after going through the Education Commission Report. In this report, they have said that they could not accept only three major recommendations of the Education Commission. But I find that there is a very important omission here. On page 198 of the Education Commission Report, there is a clear and emphatic assertion that Hindi shall be the link language of India and so every student must have a working knowledge of Hindi. But in the whole report of this Committee, there is nothing mentioned about that. Practically we are only for compromise and to somehow pull on without any foresight about the future. I am not a protagonist of English but you must have a link language so that people of one State can have some means of communication with others. Now practically you are downgrading English but you are not replacing it with anything. You may say that when you want to build a house in place of an old tottering house, you have to demolish the old house but everywhere that theory should not be practised. I think the Members of this Committee have tried to come to an understanding among themselves any how. That is called escapism. They want to escape the real problem. The real problem is the link language. If you are doing away with English, all right, but put something instead; but you have not the courage to say that every student must have at least a working knowledge of Hindi and that must be enforced. I think the three-language formula was a far better formula than this formula of one or two language formula. This is the result. The other one was a better formula and every state Government, somehow, has been trying to follow it though it is correct that in some States. There is no compulsion that people should pass in that subject— it was so far correct—but they were learning Hindi. The subject was there in the curriculum but there if we follow the recommendations of this Committee, then there will be, in the non-Hindi-speaking States, hardly any student going to learn Hindi and the result will be that in the non-Hindi-speaking States, English and the regional language will be there and in the Hindi-speaking States only Hindi will be there, nothing more. You say one other language you have to learn but it may be Sanskrit. The student will find it easier to learn Sanskrit to get better marks. To increase the aggregate of marks they will learn Sanskrit as upto the tenth class you are enforcing practically two languages. So we are following a hesitating policy in every matter and because some person or some State might get angry and so we are trying to appease by saying: 'You learn your mother-tongue and any other language, not necessarily Hindi.' This is nothing but escapism and we should not follow this procedure. In the matteer of laws that we pass, we do

[Shri P. C. Mitra.]

not always pass the laws by consensus. There are many people who oppose a particular measure but democracy means rule of the majority and we adopt those measures. Therefore the rule of the majority must prevail in education also but at the same time we must be reasonable.

There is some grumbling in some States, particularly among minorities in each State that they are to learn four languages. What is the harm if people learn more languages? Suppose a minority in Bihar has to learn Bengali, Hindi and English and Sanskrit also—and many learn Sanskrit—where is the harm? I do not think any knowledge that a community may have to acquire is a thing to be grumbled at. The South people object to Hindi by saying 'We are forced to learn Hindi whereas people of the North are not forced to learn any South Indian language' but where is the harm? Are the South people behind the people of the North? In every competition the South people are coming out in more numbers. As they are learning Hindi they have to learn more languages but they are not behind in the services. Everything is for the 5 per cent of the people in the services. The masses of people do not grudge learning Hindi and they have no affection for English but it is only for a quota in the Central Services that all this trouble has arisen.

The Education Commission Report is better. They say that everybody learn Hindi and they should also have some knowledge of English and only if they want Central Services, then only more knowledge of Hindi or some special knowledge of English is necessary. In substance they want working knowledge of English and Hindi a student must have. For any higher studies or services, a student may have special knowledge of Hindi or English but here we are going far behind and actually we are not going to serve the society or posterity by following this procedure of mother-tongue and any other language formula. The first objective mentioned in the report is:

> "make the rising generation conscious of the fundamental unity of the country in the midst of her rich diversity, proud of her cultural heritage and confident of her great future."

How is it possible when there cannot be any media of communication between the different States? How can there be this unity in diversity, I fail to understand. Language is the main criterion and it is the basic thing that is necessary for unity. Though we may condemn English but English actually has unified India. We were made first to learn English and some persons, some percentage of people may be 2 or 3 per cent, were forced to learn it and so the basic united approach was there. Now we are actually going in the reverse direction. The result will be suicidal for the country and there will be complete disintegration out of it.

1 P.M.

श्री श्रीकृष्णदत्त पालीवाल (उत्तर प्रदेश): माननीय उपसभापति महोदया, आपकी कृपा से इस सत्र भर में पहली बार मुझे बोलने का मौका मिला है, इसलिये मैं आपका अत्यन्त आभारी हूं। समयाभाव के कारण मैं केवल एक या दो बातों की ओर ध्यान दिलाना चाहूंगा। पहली बात सम्पर्क भाषा की है। सम्पर्क भाषा पर अपने विचार प्रकट करने से पहले मैं भाषाओं के संबंध में अपनी स्थिति साफ कर देना चाहता हूं। संसार भर मे ऐसी कोई भाषा नही, जिससे मैं घृणा करता हूं। हमारे राष्ट्र के पिता के शब्दकोष में घृणा जैसी तो कोई चीज थी नही। अपने देश की तो सभी भाषाओं से मैं प्रेम करता हूं, सभी भाषाओं का विकास चाहता हूं और जो मुझे जानते हैं, उन्हें यह भी मालूम है कि उत्तर प्रदेश

में उर्दू को उसका समुचित स्थान दिये जाने के पक्ष में मैंने हमेशा अपनी आवाज़ उठाई है। लेकिन जब मैं यह कहता हूं कि मैं सब भाषाओं से प्रेम करता हूं, तब मैं यह भी कहता हूं कि मैं इस बात के विरुद्ध हूं कि किसी भी प्रदेश पर उस प्रदेश के निवासियों की सहमति के बिना हिन्दी को लादने का प्रयास किया जाये। किसी भी भाषा को दूसरे भाषा-भाषी प्रदेश पर लादने के मैं विरुद्ध हूं। जब मैं यह कहता हूं तो उसके मानी यह भी होते हैं कि जो प्रदेश यह नहीं चाहता कि अंग्रेज़ी उन पर लादी जाये, उन प्रदेशों पर अंग्रेज़ी लादने का भी मैं विरोधी हूं। हिन्दी इम्पीरियलिज्म बुरा है, लेकिन उसके मानी यह नहीं है कि इंग्लिश इम्पीरियलिज्म अच्छा है। हिन्दी फैनेटिसिज्म बुरा है, लेकिन उसके मानी यह नहीं हैं कि अंग्रेजी फैनेटिसिज्म अच्छा है या हिन्दी के विरोध का फैनेटिसिज्म अच्छा है।

सम्पर्क भाषा के संबंध में विचार करते समय हमें केवल दो बातों पर ध्यान देना चाहिये। पहली बात यह कि सम्पर्क भाषा के मानी क्या हैं, सम्पर्क भाषा से हमारा मतलब क्या है और दूसरी बात यह है कि सम्पर्क भाषा की कसौटी क्या होनी चाहिये। सम्पर्क भाषा के आमतौर पर दो माने लिये जाते हैं। एक मानी तो ये लगाये जाते हैं कि देश में जितने प्रदेश हैं, उन प्रदेशों की राज्य सरकारों के बीच विचार विनिमय करने की जो भाषा हो, वह सम्पर्क भाषा है। अगर ऐसा है तो मैं यह मानता हूं कि अंग्रेज़ी सम्पर्क भाषा का काम कर सकती है, राज्यों में आपस में विचार-विनिमय करने का, लेकिन अगर सम्पर्क भाषा के मानी यह हैं कि देश में जो जनता रहती है, पचास करोड़ या पचास करोड़ से ज्यादा, उसका आपस में सम्पर्क बना रहे और कोई ऐसी भाषा हो, जिसको कि जनता समझती है, जिस भाषा का सहारा लेकर वह एक दूसरे से अपने विचारों को प्रकट कर सकती है, तो हमें यह देखना होगा कि अंग्रेज़ी इस आवश्यकता को पूरी कर सकती है या नहीं कर सकती है। ज़ाहिर है कि अभी हज़ार वर्ष तक अंग्रेज़ी इस आवश्यकता को पूरा नहीं कर सकती कभी पूरा नहीं कर सकती। वह समूचे भारत की जनता की भाषा नहीं हो सकती। ऐसी भाषा जो सम्पर्क भाषा हो वह तो हमारे देश की ही कोई भाषा होगी। सम्पर्क भाषा के मेरी मानी यह है कि वह भाषा ऐसी होनी चाहिये, जिसमें जनता आपस में आसानी से एक दूसरे के विचार समझ सकें और व्यक्त कर सके। यह भी ज़ाहिर है कि हिन्दी इस मानी में एक ऐसी भाषा है जो देश की आधे के करीब जनता की मातृ-भाषा है और उसमें एक बात यह भी है कि जो हिन्दी प्रान्तों के गरीब लोग देश भर के हर एक प्रदेश में जाकर काम करते हैं वे हिन्दी भाषा का प्रचार उस प्रदेश में भी करते हैं और इस दृष्टि से अगर हम देखें तो चाहे मद्रास हो, चाहे कलकत्ता हो, चाहे बम्बई हो, चाहे काश्मीर हो, वहां आपको गरीब लोगों में, आम जनता में हिन्दी बोलने वाले और हिन्दी समझने वाले मिल जायेंगे। इस दृष्टि से हिन्दी सम्पर्क भाषा हो सकती है और कोई दूसरी भाषा सम्पर्क भाषा नहीं हो सकती। मैं यह मानता हूं कि जब तक हिन्दी समृद्ध न हो जाये, वह इस योग्य न हो जाये कि सम्पर्क भाषा का काम कर सके, उसका पूरा विकास न हो जाये, तब तक उसको सम्पर्क भाषा के रूप में बनाने में कठिनाइयां पड़ेंगी, लेकिन मुझे इस बात की खुशी है कि हमारे दक्षिण में भी बहुत से भाई यह मानते हैं कि हिन्दी सीखने में कोई कठिनाई नहीं है। अभी अभी भोपाल में मैसूर के मुख्य मंत्री महोदय का भाषण हुआ और उन्होंने उस भाषण में यह कहा था कि 15 वर्ष के अन्दर हम हिन्दी में इतने निष्णात हो जायेंगे कि उत्तर वालों को मात दे देंगे। मैं मानता हूं कि

[श्री कृष्ण दत्त पालीवाल]

उनका यह बात नहीं है। हमारे दक्षिण के भाई चाहे तो थोड़ा सा अभ्यास करके जैसे वे और बातों में आगे बढ़े हुये हैं वैसे ही हिन्दी में भी हमसे आगे बढ़ सकते हैं। इस तरह का कोई कठिनाई नहीं है। इसके अलावा मुझे इस बात की खुशी है कि यहां इसी सदन में मेरे मित्र रत्नास्वामी जी ने यह कहा कि हिन्दी का विकास करके उसको समृद्ध करके, हिन्दी को सम्पर्क भाषा बनाया जा सकता है। तो मैं यह चाहता हूं कि हम सब लोग मिल करके और खास तौर पर हमारी सरकार और अपने शिक्षा मंत्री जी, से मैं यह कहता हूं कि इस बात का शक्ति भर प्रयत्न किया जाय कि ज्यादा से ज्यादा दस वर्ष के अन्दर हिन्दी इतनी समृद्ध और समर्थ हो जाये कि बिना किसी अपवाद के सर्वसम्मति से वह देश की सम्पर्क भाषा बन सके। दस वर्ष तक वैसे तो मैसूर के मुख्य मंत्री महोदय ने कहा था कि हम पन्द्रह वर्ष में हिन्दी में निष्णात हो सकते हैं। मैं उनको याद दिलाऊंगा आपके द्वारा कि पन्द्रह वर्ष से ज्यादा हो गये हैं, लेकिन अभी तक तो हमने हिन्दी को सिखाना भी अच्छी तरह से शुरू नहीं किया, इस बात के बावजूद कि राष्ट्रभाषा के प्रचार के लिये महात्मा गांधी बराबर प्रयत्न करते रहे।

हिन्दी के विरोध के संबंध में मैं इतना कह दूं कि यह आश्चर्य की बात है कि स्वतन्त्रता से पहले अहिंदी भाषी प्रदेश के नेताओं ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में मानने की बात कही। महात्मा गांधी हिन्दी भाषी प्रदेश के नहीं थे, गुजरात के थे, लोकमान्य तिलक हिन्दी भाषी प्रदेश के नहीं थे, महाराष्ट्र के थे, देशबन्धु दास, नेता जी सुभाष चन्द्र बोस हिन्दी भाषी प्रदेश के नहीं थे, बंगाल के थे। तो इस से स्वतन्त्रता से पहले तो सभी इस बात से सहमत थे कि हिन्दी राष्ट्रभाषा हो, सम्पर्क भाषा भी हो। जब विधान निर्मात्री सभा बैठी थी, तब भी हिन्दी का विरोध बहुत कम था। यह भी मैं मान लेता हूं कि हम हिन्दी के प्रेमियों, हिन्दी को लोगों पर लादने की जो जल्दी थी और जिस तरह से हिन्दी का विकास किया, जिस तरह को हिन्दी बनाई, जैसा कि मेरे मित्र विनायक सिंह जी ने कल कहा, उससे हिन्दी के प्रति विरोध की भावना पैदा हुई है। वह प्रतिक्रिया हुई है और प्रतिक्रिया स्वरूप उसका विरोध हो रहा है, यह मैं माने लेता हूं, लेकिन साथ ही मुझे यह कहना है कि एक्शन एण्ड रिएक्शन आर ईक्वल एण्ड अपोजिट, जैसे हिंदी के अति प्रेम से हिन्दी के विरोध की भावना पैदा हुई, उसी तरह से हिन्दी के अंध विरोध से, अति विरोध से दूसरी भावना पैदा हो सकती है जो देश के लिये कभी भी अच्छी नहीं हो सकता है। इसलिये मेरा कहना यह है कि जैसाकि इस रिपोर्ट में भी कहा गया है मांग की है और अभी मेरे मित्र मिश्रा जी ने उससे पढ़कर सुनाया भी, उसे देखते हुये हमें यह कोशिश सर्वसम्मति से करनी चाहिये अब भी कि दस वर्ष की अवधि हो, पन्द्रह वर्ष की हो, पन्द्रह वर्ष तक हम प्रतीक्षा कर चुके हैं राष्ट्र की एकता के नाम पर और अहिंदी प्रदेश की भाषाओं के प्रति भावनाओं का आदर करने के लिये, हम दस वर्ष और ठहर सकते हैं, पन्द्रह वर्ष और ठहर सकते हैं, लेकिन कोई अवधि निश्चित हो जानी चाहिये और उसके बाद सर्व सम्मति से हिन्दी को सम्पर्क भाषा मान लेना चाहिये।

लेकिन कोई अवधि निश्चित होनी चाहिये और उसके बाद सर्वसम्मत मत से हिन्दी को सम्पर्क भाषा मान लिया जाना चाहिये।

दूसरी बात, जिसकी तरफ मैं आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं वह यह है कि जो रिपोर्ट मेरे पास है शिक्षा आयोग की, उस के 60 पृष्ठ पर से पार्लियामेंट के मेम्बरों की जो कमेटी बनाई गई थी, उसकी शिक्षा

संबंधी राष्ट्रीय नीति पर रिपोर्ट शुरू होती है । (*Time bell rings*) मै एक मिनट में समाप्त कर दूंगा । उस मे 161 पेज में शिक्षा संबंधी राष्ट्रीय नीति के बारे में वर्णन किया गया है । उस राष्ट्रीय नीति मे चार बातों के संबंध में हाइयेस्ट प्रायोरिटी दी गई है । मेरे कहने का मतलब यह है कि अगर इन बातों को सच्चाई के साथ कार्यान्वित किया जाये तो भारत को एक मज़बूत आधारशिला बन सकती है ।

इन शब्दों के साथ मैं अपना भाषण समाप्त करता हूं ।

श्री बी० एन० मंडल (बिहार) : उपसभापति महोदया, आज करीब 20 वर्षों से देश मे एक तरह से किंकर्त्तव्य-विमूढ़ता चली आ रही है । यह किंकर्त्तव्य-विमूढ़ता सिर्फ भाषा के क्षेत्र मे ही नही है, बल्कि दूसरे देशों में भी है । यह क्यों है ? इसका कारण है कि आज देश मे जनतंत्र है, लेकिन देश मे गरीब और अमीर दोनों है और बड़ी जाति और छोटी जाति, दोनों तरह के लोग है और देश का नेतृत्व बड़ी जाति के अमीर लोगों के हाथों मे है । जनतन्त्र मे जो उनको करना चाहिये, वह उनके स्वार्थ के खिलाफ पड़ता है, इसलिये उसको नही करना चाहते है । इसीलिये देश मे आज किंकर्त्तव्य-विमूढ़ता है । इसी के साथ भाषा का सवाल भी जुड़ा हुआ है । इसलिये मैं चाहूंगा कि यह भाषा का जो सवाल है, वह जल्द से जल्द इस देश के हक मे हल हो जाना चाहिये ।

इस सवाल को हल करने का केवल एक ही रास्ता है और वह रास्ता यह है कि जो प्रान्त है, जो राज्य का क्षेत्र है, उसकी जो जो भाषा है उसी भाषा मे शिक्षा तथा राजकाज चलना चाहिये । लेकिन सारे देश के लिये, राष्ट्रीय पैमाने पर एक सम्पर्क भाषा अवश्य होनी चाहिये, जिससे सारे देश का कामकाज अच्छी तरह से चल सके । इस तरह की कौनसी भाषा होनी चाहिये, उसके लिये कोई राय देने की जरूरत नही है । स्वतंत्रता संग्राम के चलाने वालों ने इस देश को स्वतन्त्र करने वालों ने, जिन लोगों ने शुरू में प्रयास किया था, उन लोगों ने उसी समय कह दिया था कि यहां की भाषा क्या होगी, जिस भाषा से राष्ट्रीय कामकाज चलेगा । जिस भाषा के बारे में उन्होंने कहा था वह भाषा हिन्दी थी, इस बात को उन लोगों ने उस समय मान लिया था । इसलिये हिन्दी को इस देश में राष्ट्रीय स्तर पर लागू किया जाना चाहिये आज हिन्दी के खिलाफ जो कुछ बाते हो रही है, उस विरोध का यह कारण नहीं है कि अंग्रेजी की जगह हिन्दी को सीखने के लिये लोगों को कठिनाई होगी । इसका कोई दूसरा ही कारण है और वह कारण यह है कि इस देश में कुछ लोग ऐसे हैं, जो इस देश में समाजवाद की नीति को नहीं लागू करना चाहते है । वे ही लोग आर्थिक क्षेत्र में भी समाजवाद के विरोधी है । इस तरह के जो लोग है, उनकी यह नीति है कि सास्कृतिक क्षेत्र में कोई ऐसी बात नही लानी चाहिये जिससे देश मे समानता कायम हो सके । वे चाहते है कि जो भाषा देश की जनता मे सम्पर्क कायम कर सकती है, ऐसी भाषा को पनपने नही देना चाहिये । इसलिये मेरा कहना है कि यह जो लडाई चल रही है कि हिन्दी हो या न हो, अंग्रेजी रहे या न रहे, इस तरह की लड़ाई नकली और वास्तविक है । इस तरह की लड़ाई की परवाह किये बिना देश की एकता के लिये यह जरूरी है कि उसकी एक भाषा हो और वह भाषा हिन्दी ही हो सकती है, जिसको राष्ट्रीय स्तर पर लागू कर ही देना चाहिये । शिक्षा के माध्यम मे जो ऊंची शिक्षा है उसमे भी हिन्दी को लागू कर देना चाहिये । अगर हिन्दी को शिक्षा का माध्यम नहीं

[श्री बी० एन० मंडल]

नाया जायेगा, तो इसका मनलब यह होगा कि देश खंडित हो जायेगा। अगर रीजनल लेंग्वेज के जरिये ऊपर स्तर की शिक्षा होगी तो राष्ट्रीय स्तर का काम चलाने में दिक्कत होगी। इसलिये मेरा निवेदन है कि ऊंचे स्तर पर एक राष्ट्रीय भाषा बहुत जरूरी है और उसमें हिन्दी को स्थान मिलना चाहिये, जिसको मैं उचित समझता हूं।

इसके अलावा पार्लियामेंट के मदस्यों की जो कमेटी बनाई गई थी, उस कमेटी की रिपोर्ट को हमने देखा है। एक जगह पर बैकवर्डनैस की परिभाषा के बारे में कहा गया है। उन लोगों ने बैकवर्डनैस की जो परिभाषा की है, उसमें जाति का आधार नहीं माना है। उसे जातीय आधार से उठा कर अब उसको आर्थिक आधार पर ले जाना चाहते हैं। रिपोर्ट में आर्थिक के साथ साथ सामाजिक आधार भी कहा गया है। जो जातीय आधार है, वह तो सामाजिक आधार है ही। इसलिये अब जो कहा जाता है, वह वास्तव में आर्थिक आधार कहा जा रहा है। इस तरह का जो सुझाव है, वह बहुत ही प्रपंचपूर्ण और नुकसानदेह है। वह देश को तोड़ने वाला सुझाव है। जो हमारा संविधान है, उसमें देश की एकता के लिये यह बात कही गई है। उसमें कहा गया है कि जो नीचे समाज के लोग हैं उनको दूसरों के साथ समान स्तर पर लाने का काम किया जाना चाहिये। इस काम को करने के लिये जातीय आधार रखा गया है जिनको बड़ी जातियों ने अभी तक दबाया है। जिनका नैतिक स्तर, सामाजिक स्तर और आर्थिक स्तर गिरा हुआ है उनको खास रियायत देकर एक स्तर पर लाने की कोशिश की जानी चाहिये। इस तरह से बैकवर्डनैस को दूर करने के लिये जातीय आधार रखा गया था। लेकिन जो लोग आज उसको आर्थिक आधार पर रखना चाहते हैं, वे उनको आगे नहीं बढ़ने देना चाहते हैं। वे लोग कहते है कि इस तरह की जो उनकी इच्छा है, वह देश के हित में है, लेकिन मैं इस बात को गलत मानता हूं।

हिन्दी भाषा में जो शब्द अंग्रेजी के, फारसी के, अरबी के आ गये हैं, उनको इसमें ले लेना चाहिये। लेकिन इसके साथ ही साथ जो दक्षिणी भाषाओं के प्रचलित शब्द है, जो दिन-रात काम में आते है, ऐसे शब्दों का भी संज्ञा के रूप में और क्रिया के रूप में हिन्दी भाषा में समावेश कर लेना चाहिये। यह भी मेरा सुझाव है कि हिन्दी को क्लिष्ट संस्कृत शब्दों से कठिन बनाना हिन्दी के प्रति द्रोह है।

जहां तक कामन स्कूलों या नेबरहुड स्कूलों का सवाल है, अगर इसका मतलब यह है कि आज देश में जो बड़े-बड़े पब्लिक स्कूल है, जिनमें बड़े-बड़े लोगों के लड़के पढ़ते हैं, वे बंद हो जायेंगे तो मैं इस चीज का स्वागत करता हूं। मैं यह कहना चाहता हूं कि आप जिस तरह के नेबरहुड स्कूल खोलना चाहते है, उनमें सब को एक ही तरह की शिक्षा मिलनी चाहिये, एक ही तरह के शिक्षक उनमें होने चाहियें, एक ही तरह का खर्च उनमें होना चाहिये और एक ही तरह का वातावरण उनमें होना चाहिये। इस चीज का मै स्वागत करता हूं। हम यह भी देखते हैं कि जो आर्थिक शिक्षा की संस्थाएं हैं, इन संस्थाओं में बड़ी जाति के लोग पहले से ही उनमें भरे पड़े हुए है, वे वहां पर ऊंची से ऊंची जगहों पर भरे पड़े हुए है। इसी तरह से यूनिवर्सिटी कमिशन और जो दूसरी इंडिपेण्डेण्ट संस्थाएं हैं, इन संस्थाओं में भी बड़ी जाति के लोग भरे पड़े हुए है। शिक्षण संस्थाओं में जो छोटी जाति के लोग है, उनको प्रमोशन में, अपाइण्टमेंट में न्याय नहीं मिलता है और उनके साथ तरह तरह का अन्याय किया जाता है। सिर्फ इन शिक्षण संस्थाओं में ही छोटी जाति के लोगों के साथ

अन्याय नहीं किया जाता, बल्कि, विश्वविद्यालयों में जहां पर छोटी जाति के लड़के पढ़ते हैं, पिछड़ी जाति के लड़के पढ़ते है, अगर कोई ऐसा लड़का तीक्ष्ण बुद्धि का हो, तो जो बड़ी जात का प्रोफेसर होता है, वह इस तरह की कोशिश करता है कि वह लड़का आगे बढ़ने न पाये ताकि वह कम्पीटिशन में बड़ी जाति के लड़कों से बाजी न मार ले जाये। इस तरह की बात शिक्षा क्षेत्र में भी होती है। मैं शिक्षा मंत्री जी से कहना चाहता हूं कि जो एजूकेशन का एडमिनिस्ट्रेशन होगा, उसमें इस बात का खयाल रखा जाय कि पिछड़ी जाति के लड़कों के साथ भेद भाव का बर्ताव न किया जाय। इसलिए मैं चाहता हूं कि इस बात की इन्क्वायरी के लिए एक कमिशन हो, जो शिक्षण संस्थाओं में इस बात की जांच करे कि वहां पर जो पिछड़ी जाति के लड़के पढ़ते हैं या प्रोफेसर हैं, उनके साथ प्रमोशन में या वहां की तरक्की में किसी तरह का भेद-भाव न किया जाय और न उनको किसी तरह से दबाया जाय। उनके साथ वहां पर जो अन्याय होता है, उसकी पूरी जांच होनी चाहिये। इस तरह का मेरा सुझाव है।

PANDIT S. S. N. TANKHA (Uttar Pradesh Madam Deputy Chairman, the other day when the Education Minister introduced his motion for the acceptance of this House, he was pleased to observe:—

> "If this policy on education is approved by Parliament and by the Government, the question of language to my mind, which is just an instrument to implement this national policy, will be solved very easily"

With the greatest respect to the learned Honourable Minister, I beg to differ from him. I am of the view that unless the nation decides upon the place which it has to give to Hindi and to English in the teaching in schools, this Report can never be accepted by all the people with the same good will and zeal as it should otherwise have been. I entirely agree with the proposition that English cannot be the language of the nation for all time to come. While I agree with the proposition that a foreign language cannot take the place of the language of one's own country, I am, at the same time, not prepared to accept the proposition that time has come for us to give up the study of English in our schools. It is true that the language of one's own country has a much greater unifying and integrating force for its people, but in a country like ours, which has so many different, developed languages, with their rich literature and heritage and standing and which the peoples of those different parts of the country rightly cherish and admire and which they are loath to give up, it would not be right on our part to compel these people to give up those notions quickly, whether right or wrong. Therefore, to compel the people of any region to take to Hindi within a period of five or ten years will be a very wrong step on our part to take. We should, instead, try to persuade the people to take to a common language which can be easily understood and adopted with ease by the greatest mass of people in the country and that language, I am prepared to accept, can be no other than the Hindi language. Therefore, our aim should be to win over the people of the South to accept Hindi as the common language of the people of this country and it is on this basis that our Constitution has accepted Hindi as the official language of the Union. Instead of the method of persuasion, if we force a language . . .

SHRI GANGA SHARAN SINHA (Bihar): May I interrupt just for a minute? I would like to correct him. Nowhere in the Report have we suggested that non-Hindi people should be compelled to learn Hindi in five years. Nowhere have we said it. It was not our intention either directly

[Shri Ganga Sharan Sinha.]

or indirectly to put any compulsion regarding any language. That is the main thing and that was the basis. It is nowhere in the Report that non-Hindi people will have to take to Hindi in five years. There is nowhere any compulsion regarding Hindi.

PANDIT S. S. N. TANKHA: Instead of the method of persuasion, if we force a language—whatever that language may be—on an unwilling people in any part of the country, we shall be up against an opposition which will disintegrate the unity of the country, instead of integrating it. It is as such very essential that we go slow in this matter, even though it would mean a much longer time to make Hindi the national language. But, to my mind, the time factor is not as important in this connection as the unity and integrity of the country is and, therefore Sir, no element of compulsion should be exercised in this matter.

What I have just said about the imposition of the Hindi language on an unwilling people is equally applicable, if not with greater force, to those who desire the English language to continue in use as the link language for all time, or at least till such time as Hindi takes its rightful place as the link language and as the language of the nation. We have seen the evil effects of our attempt to do away with English altogether not long ago and as such it is incumbent on us to respect the wishes of the people of all parts of the country in the matter of language if we wish to pull together for the good of the country as a whole and for its future benefit. I am definitely of the view that the assurances given to the people of the South by our late revered Prime Minister Pandit Jawaharlal Nehru should be solemnly respected and given effect to by the inclusion of those assurances in the Language Act. No good will come out by our becoming diehards in the matter and denying assurances being provided in the statute.

Madam, I do not know what was the intention of our former rulers in imposing the English language on us, but I do think that we have greatly benefited by it and I would go to the length of saying that it is through the learning of this English language that our freedom-fighters imbibed the urge for freedom and it is through the learning of English language that they took up a stand to fight the British and compel them to leave. Therefore, it would be wrong to say that the English language has made us slaves. I would venture to say that its further use in the years to come will not be prejudicial to our interests, but it would be in the best interests of the country, owing to the importance of this language in the prsent-day world, especially so in the matter of development of science, technology and medicine.

Once this proposition is accepted, we have to give a proper place to the study of the English language in our schools and colleges. I would, therefore, suggest that the study of English should be provided for compulsorily at some stage or the other in our educational system. The Report of the Commission says that people can take to it as an optional language in later classes, but I would venture to ask, as to how, unless they get an earlier grounding in the language, can they be expected to take to that language in higher classes? Therefore, we have got to provide at one stage or the other for the teaching of English in the schools.

While dealing with this point I may be permitted to say that I consider the new scheme of a two-language formula which has now been recommended by the Commission to be a backward step from the stand of the three-language formula, which had been evolved earlier. The idea of the nation in accepting that formula was that it would enable people of all re-

gions to learn Hindi as also to learn their own regional languages along with the English language. But what has happened really is this that while the South has adhered to that formula, the North has not. It is indeed very regrettable that the northern States did not insist upon the study of any of the South Indian languages in any of the school classes and it is for this reason that the North has not progressed in that direction and it is for that reason that the formula has again to be changed, but I am definitely of the view that it is very important that, that formula should be continued and accepted as the correct formula for teaching the languages in schools.

Now in regard to the neighbourhood schools, I do not think that the scheme, as it has been evolved, is for the good of the nation. It is true that it will provide facility to the children for their studies round about the place of their residence and which will be a good thing, but at the same time to compel those children who can or who have been trained in better schools and in better and more suitable surroundings would be a wrong step. It is something like the abolition of the First Class by the Railway authorities.

SHRI LOKANATH MISRA: The Ministers' sons will be going abroad. Our sons will be obliged to go there.

PANDIT S. S. N. TANKHA: That will certainly be the effect of it.

THE MINISTER OF STATE IN THE MINISTRY OF EDUCATION (SHRI BHAGWAT JHA AZAD): There is no exception in this for the Minister's son.

PANDIT S. S. N. TANKHA: I do not object to the clubbing of the children of the rich and the poor at all, but what I say is that the standard of living of the poorer classes is today so different from that of the middle, or the upper classes, that to mix them together for schooling would only mean bringing down the level of teaching for the upper and middle class children.

[*The Vice-Chairman* (SHRI AKBAR ALI KHAN) in the Chair.]

It will mean the downgrading of education of the children of the higher classes to which I would strongly object. Unless the Education Ministry is able to provide better trained teachers for regional language teaching in our neighbourhood schools, the teaching will go down in its standard. I am sure it will be difficult or rather impossible for the Ministry to find an adequate number of trained teachers of good standard and learning to man these large numbers of schools that would be required to be set up when education is made compulsory for all.

The abolition of public schools also I strongly oppose because I think that the education which they are now giving is quite good and it is not at all against the interests of the country. At one time, it is certainly true, that they were producing snobs who, when out of schools, considered themselves quite aloof from the rest of the people, but it is not so now. My own grandson, my daughter's son, is reading in the Doon School and I am glad to say that he is a very nice boy and very well behaved. He has no snobbish ideas at all and he behaves with all like any other good student. These schools, I am glad to say, are also now imparting the sort of teaching which is recommended by the commission, namely, production-oriented teaching. They have classes in which they give arts and crafts training to the children, and my grandson, about whom I was speaking just now, has produced in one year a wooden table which he made himself. It was very beautifully made, and in the other year he produced an electric standard lamp, very nicely made indeed and all made by himself. I was surprised to see that done so well. Therefore, it has to be admitted that, they are giving good and efficient training, and to say, that these schools should be closed down will be a very wrong step.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI AKBAR ALI KHAN): Your time is up.

PANDIT S. S. N. TANKHA: A few minutes more. Sir. The next thing about which I wish to speak is about the teaching of the language of the minority communities. I am very sorry to say that the minorities have been treated very badly by the Government in the years after freedom, specially those who had taken to Urdu reading and writing. You know, Sir, my own State, U.P., is a Hindi and Urdu speaking State. But as soon as the popular Governments came in after our Independence, they discouraged Urdu and, they abolished the filing of applications in Urdu in courts of law. The result was that thousands of people lost their jobs as they could not do any work because they did not know Hindi. That was a very wrong step to take. The Education Ministry in that State also prescribed certain rules for the teaching of Urdu in schools to the children. It was said that unless a certain number of students came forward in a school they would not be imparted teaching of Urdu. The result was that if only 4 or 5 children went for admission to a school—to whichever school they went—they were told: we cannot give you Urdu education because the number must be so much, 10 or 15—or any number which they may have fixed. Where then and how, are all these students expected to assemble together to go to apply in one particular school at one particular time? That never happened or could happen with the result that children in spite of the fact that their parents wanted them to be trained in their mother tongue, in that language they could not get it done. This was very keenly felt, and I think justifiably, by that class of people. And that was perhaps because somehow the rulers of the State had a wrong notion about the Urdu language. They thought that whoever learned, or wished to learn, the Urdu language must be a Pakistani. Therefore, they did not want these people to be encouraged in any way. But that is a completely wrong notion. So many Hindus in U.P., particularly Kayastha and the Kashmiri communities, are Urdu-speaking, and they would have continued to take to Urdu if these obstacles had not been placed before them. When the census enumerators came to take the census, they enquired from you, "what is your language?" If you said Urdu, they said, "No, let it be Hindi". They would write Hindi and get you recorded as Hindi-speaking. This attitude must go. Every effort must be made to allow the people, who wish to put their children to study through the Urdu Language to do so at all stage. This should be allowed and encouraged.

A suggestion was made yesterday that Urdu universities should be established. I whole-heartedly support that proposition, but I would say that already there are, or at least were two universities which were wholly Urdu teaching universities, namely, the University of Hyderabad from where you come, Sir, and the Aligarh University.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI AKBAR ALI KHAN): It is not now.

PANDIT S. S. N. TANKHA: That is the misfortune. They have not been allowed to continue as such. But why should they not have been allowed to continue? After all if Urdu language has got good literature behind it, why should you prevent it from disseminating it and allow teaching in that subject? If in future any idea arises for the establishment of an Urdu university, wherever it may be, and which I think should be accepted by the Government, then the Hyderabad University should be asked to take to it again. The other university in the North can be the Aligarh University. Certainly if the Government thinks that these two universities, if allowed to propagate

Urdu, will carry on anti-national activities, then of course strict watch should be exercised on them, and it should be seen that the Hyderabad University does not produce Razakars and the Muslim University at Aligarh does not produce Pakistanis. That is for the Government to see. At the same time just because you have that suspicion that they may produce such people, to prevent the teaching or the learning of that language is a wrong step.

A few words about the teaching of mathematics compulsorily in Classes 9 and 10. At one stage when I was in school, mathematics was a compulsory subject in the 8th, 9th and 10th classes. Somehow or other that was given up. Why it was given up, I cannot say. I did not quite like the idea, but all the same it was given up in the school curriculum. But once it has been given up, I do not see any reason why it should be made a compulsory subject again. It is, under the present curriculum, an optional subject and one can either take mathematics or take any other subject. But if mathematics is to be made a compulsory subject, I would say that as far as arithmetic is concerned, it may be made a compulsory subject if at all, but not algebra and geometry because they are not things of common, every-day utility in the day-to-day life of children after their studies have ended. What happens to the algebra and geometry which one learns? You forget it unless you go into the engineering line or some other similar line. Those who want to put their children into these lines, let them give their children training in these subjects but otherwise there is no need for having mathematics as a compulsory subject. Why should you have this as a compulsory subject? Mathematics is one of the stumbling-blocks for children, which somehow or the other they cannot easily understand or easily follow. Therefore allow them to give it up if they so desire.

I welcome the pay rise for the teachers which has been recommended by the Government and I hope that the States will be compelled to follow the scales which the Centre has prescribed. I say this because I find that in spite of the fact that the Central Government has said that it will be prepared to pay the salaries of the teachers to the extent of their pay rise in the States and even in respect of those in aided schools, the necessary amount is neither being paid to the teachers, nor is it being placed at the disposal of the institutions, which thus hampers their pay rises.

डा० हरिवंश राय बच्चन (नामनिर्देशित) : श्रीमन् शिक्षा आयोग की जो रिपोर्ट हमारे सामने है उसमें शिक्षा से संबद्ध बहुत से विषयों के ऊपर चिन्तन किया गया है । शिक्षा एक बड़ा व्यापक विषय है और उस विषय पर बहुत कुछ कहा जा सकता है ।

बड़ी अच्छी बात है कि 20 वर्षों के बाद ही सही, हमने उस पर कुछ चिन्तन किया, और कुछ ऐसे परिणामों पर पहुंचे जिन पर इस देश के बहुत से मनीषी और विचारक एकमत हैं और आशा है कि जिस पर सब लोग एकमत हुये हैं उस पर कुछ काम भी होगा क्योंकि हमारे देश की सब से बड़ी खराबी यह है कि हम लोग योजनायें तो बहुत बड़ी बड़ी बनाते है किन्तु उनके ऊपर काम नहीं कर सकते । तो पहली बात जो मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि इन में से जितनी भी बातें ऐसी है जिन पर कि ज्यादा से ज्यादा लोग सहमत हैं उनको जल्दी से जल्दी कार्य रूप में परिणत किया जाय जिससे कि देश को संतोष हो कि इस कमिशन पर जो इतना समय और इतनी शक्ति व्यय हुई उसका कोई व्यावहारिक परिणाम भी निकला और मुझे आशा है कि वे परिणाम निश्चय ही अच्छे होंगे ।

दूसरी बात जो मैं कहना चाहता हूं और जिस पर बहुत से सदस्यों ने प्रकाश डाला

[डा० हरिवंश राय बच्चन]

हैं वह शिक्षा के माध्यम की है । शिक्षा के माध्यम का विषय एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है और भारतवर्ष की वर्तमान परिस्थितियों में उस पर निर्णय लेना बहुत आवश्यक भी है । भारतवर्ष एक युनिट या एक खड हमेशा से माना गया है । अगर हम इस के इतिहास और इसकी संस्कृति को देखें तो बड़ा आश्चर्य होता है कि जब कोई ऐसा माध्यम नहीं था जिसके जरिये दूर देश तक फैले हुए इस बड़े देश के लोग एक दूसरे के निकट आ सकें या अपने विचारों का आदान-प्रदान कर सके उस समय भी हमारे अन्दर एक ऐसी एकसूत्रता थी जिस से सारा देश बंधा हुआ था । कभी मैं सोचता हूं कि वह कौन सा माध्यम था जिस से कि इस देश के लोग उत्तर से दक्षिण तक और पूर्व से पश्चिम तक जब कि हमारा देश विभाजित नही हुआ था—अपने विचारों का आदान-प्रदान करते थे और इस स्तर पर आदान-प्रदान करते थे कि उनकी विचारधारा, उनकी कला, उनकी संस्कृति, उन के इतिहास , सं में एक अपूर्व एकता मौजूद थी और आज ज कि विज्ञान ने हमें ऐसे बहुत से साधन दिये है जिन के द्वारा हम इस देश के लोगों को अधिक निकटता से समझ सकते हैं त देश में एक विघटन की स्थिति आ गई है । जहां तक भाषा का प्रश्न है, इस देश मे शायद सस्कृत ऐसी भाषा रही हो, या पाली रही हो । यदि हम अशोक के शिला लेखों को देखें तो मालूम होता है कि एक ही भाषा शिलालेखों मे उत्तर से दक्षिण तक लिखी हुई है, शायद इस भाषा को समझने वाले भी थे । तो कोई एसी भाषा थी, वह सस्कृत रही हो या पाली , प्राकृत या अपभ्रश रही हो जिसको देश के तमाम लोग बराबर समझते रहे और जिस में उच्चत्तर स्तर पर विचारों का आदान-प्रदान होता रहा । अग्रेज़ों के आने के पश्चात् इस देश की भाषाओं का जो स्वाभाविक विकास था वह निश्चय ही रुक गया और बहुत दिनों तक रुका रहा । अग्रेजों के चले जाने के बाद इस देश में अग्रेजी रह नहीं सकती । बहुत से लोगों ने इस बात पर अपना मत प्रकट किया है । विनोवा भावे ने यह बात कही है कि हिन्दुस्तान का स्वतत्र और आजाद मस्तिष्क इस बात को स्वीकार नहीं करेगा कि एक परदेशी भाषा, एक विदेशी भाषा दिमाग के ऊपर बैठी रहे । अग्रेजी का स्टैन्डर्ड इस देश में गिरेगा और बराबर गिरता रहेगा, गिरता जायगा । जिन लोगों का सम्बन्ध युनिवर्सिटी या विश्वविद्यालयों से है, मेरा भी बहुत दिनों तक सम्बन्ध रह चुका है, वे अपने अनुभव से यह बात बता सकते हैं । किसी भी कक्षा में पढ़ने वालों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाय कि हाईस्कूल का स्डटैर्ड अब से पहले क्या होता था और अ क्या रह गया है । बी०ए० का स्टैन्डर्ड पहले क्या था और अब क्या हो गया है, एम० ए० का स्टैडर्ड त क्या था और अब क्या है तो आप स्पष्ट देखेंगे । शायद अग्रेजी आज बहुत पढ़ाई जाती है और बहुत कुछ काम अग्रेज़ी में होता है लेकिन हमारा मस्तिष्क, हमारा स्वतंत्र मस्तिष्क, अग्रेजी को ग्रहण नहीं कर सकता । तो अग्रेजी का स्टैडर्ड गिरेगा और बराबर गिरेगा और एक समय ऐसा आयेगा कि यहां पर अग्रेजी के द्वारा कोई भी ऐसा काम जिस में कि विचार और बुद्धि की परिवक्ता की आवश्यकता हो वह हर्गिज नही हो सकेगा । इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि इस देश की भाषायें विकसित हों ।

अग्रेज़ी के हटने पर कभी भी हिन्दी भाषियों ने यह बात नही सोची कि अग्रेज़ी इस देश में जो स्थान रखती है वही स्थान हिन्दी ले लेगी । अग्रेजी ने इस देश में सब भाषाओं के विकास को रोका और दबाया और जब अग्रेज यहां से चले गये, हम आजाद हुये, और अग्रेजी यहां से जा रही है तो यह ज़रूरी और स्वाभाविक भी है कि इस देश की सब भाषायें विकसित हों, इन सब भाषाओं के विकसित होने का अवसर मिले, लेकिन बहुत से लोगों ने इस सम्बन्ध में एक भय प्रकट किया । अगर

प्रत्येक भाषा उच्च से उच्च शिक्षा, परीक्षा, शोध, रिसर्च आदि की भाषा होती है, हाई कोर्ट की भाषा होती है, कचहरियों की भाषा होती है, विधान परिषद् की भाषा होती है, यानी उस प्रान्त मे या प्रदेश में जहां की वह भाषा है, उसका कोई क्षेत्र उसके लिए अवरुद्ध नही रहता, तो निश्चय है कि उस भाषा का पूरा विकास होगा । तब एक खतरा देश के सामने आ जाता है कि अगर देश की इतनी भाषाये अलग अलग विकसित होगी तो स्थिति क्या होगी । स्वाभाविक, वे विकसित होंगी क्योकि उनके लिये उच्च शिक्षा, उच्च परीक्षा और उच्च से उच्च शोध, सब के लिये मौका मिलेगा । अभी तो सच पूछे तो भाषाओ का विकास ही नही हुआ है । कभी कभी लोग कहते है कि हमारी भाषाये बहुत विकसित है, इसमे उपन्यास है, नाटक है, कहानिया है, कविता हैं, जीवन चरित्र आदि है और इसके बल पर कहते है कि हमारी भाषाये विकसित है । जब भाषा इतनी विकसित हो जाय कि संसद में, सुप्रीम कोर्ट मे, हाई कोर्ट मे, यूनिवर्सिटियों में प्रत्येक कार्य करने तथा ऊचे से ऊंचे विषय को पढाने में वह सक्षम हो उस समय हम कह सकते है कि हमारी भाषा विकसित हो गई, लेकिन ऐसा भी नही हो सकता कि हम इंतजार करे कि जब भाषा विकसित हो जायेगी तभी उसको यह अवसर दिया जायगा । हमारी सब से बडी गल्ती यह थी कि हमने इसको फौरन नही स्वीकार कर लिया, टूटी फूटी भाषा के आधार पर हम यह काम 20 वष पहले शुरू कर देते तो आज तक ये भाषाये विकसित हो जाती और अगर आज भी हम यह गल्ती करने जा रहे है कि जब तक हमारी भाषा विकमित नही होती—जैसा कि बार बार यह कहा गया कि जब हिन्दी डेवलप हो जायगी तब अंग्रेजी का स्थान लेगी तब तक हम उसे काम मे नही लाएंगे, तो आप प्रलय काल तक इंतजार कर सकते हैं, हिन्दी कभी भी विकसित नही हो सकेगी । कोई भी भाषा तब विकसित होती है जब भाषा को मौका दिया जाता है, अवसर दिया जाता है, उसका प्रयोग किया जाता है ।

यहा पर एक माननीय सदस्य ने यह कहा कि एक प्रकार की नकली हिंदी हमारे सामने आ रही है । वह क्यो आ रही है ? इसलिये कि आपने उसे प्रयोग की भाषा नही बनाया, आपने उसे अनुवाद और टर्मिनालाजी की भाषा बनाकर रख दिया । इस कारण वह एक प्रकार की नकली भाषा बन गई । अगर हिन्दी, मान ले कि एक प्रकार की टूटी फूटी भाषा भी थी तो उसी में आपको काम शुरू करना चाहिये था, और अब तक उसका निश्चय ही विकास हो जाता । इसलिये आवश्यकता इस बात की है कि इसको तुरन्त अवसर दिया जाय, पीछे पछताने से कुछ नही होगा । कमाल अतातुर्क के सामने भी भाषा का प्रश्न उपस्थित हुआ था । शायद उन्होने मौलवियों से पूछा कि तुर्की भाषा कितने दिनों में समर्थ हो जायेगी ? उन्होने कहा पच्चीस वर्ष बाद । अतातुर्क ने कहा, समझ लो आज पच्चीस वर्ष खत्म हो गये और आज जो काम शुरू करना है शुरू कर दो । बीस वर्ष गुजर गये हमने बहुत सी गलतिया की, लेकिन गलतियों से सबक लेना चाहिये । अब हम वह काम शुरू करे जो आज से 20 वर्ष पहले करना चाहिये था । हम समझ ले 1947 आज है, आज हमको क्या करना है हम तय कर ले । आज हम अंग्रेजी न शुरू करे, बल्कि अपनी भाषा से करे और उसे व्यवहार मे लाये । बड़ी अच्छी बात है कि पाच वर्ष की अवधि दी गई । मैं तो कहता हू इतनी भी अवधि न दी जाय । गाधी जी से किसी ने यह प्रश्न किया था कि हमारे पास पाठय पुस्तकें नही है, हम कैसे पढ़ायेंगे ? गाधी जी ने कहा मैं चाहता हूं कि अगर पाठय पुस्तकें

[डा० हरिवंश राय बच्चन]

नहीं हैं तो अध्यापक लोग अपने ज्ञान के बल पर, अपने निरीक्षण और अनुभव के आधार पर किताबें बनावें और पढ़ायें। कम से कम उस ज्ञान का संबंध इस देश की धरती के मूल से, आधार से होगा, वह कैसा ज्ञान, जिसका इस देश की धरती के साथ कोई संबंध नहीं। आज हम इकानामिक्स पढ़ते है, विज्ञान पढ़ते हैं, दूसरे विषय पढ़ते हैं जिनका इस देश की धरती के साथ, जन-जीवन के साथ कोई सम्पर्क नहीं। हमें ऐसी विद्या चाहिये, ज्ञान चाहिये, ऐसे विद्यालय चाहिये जो इस देश की धरती में हुए ज्ञान को ऊपर उठाय और हमारे सामने लाएं। वह ज्ञान हमारी नस में पैठेगा। होता क्या है कि हमारे बहुत से विद्यार्थी विदेशी भाषा के माध्यम से जो ज्ञान प्राप्त भी करते हैं, परीक्षा-हाल के बाहर निकल कर उसका उनको कुछ पता नहीं रहता, वह सब भूल जाते हैं। लड़कों से आप पूछिये : वे कहेंगे उन्होंने इम्तिहान दे दिये और काम खत्म हो गया। जो ज्ञान इस देश की धरती से उठेगा, जो इस देश की सामाजिक परि-स्थितियों से, देश के जीवन से सम्प्रक्त होकर निकलेगा वही ज्ञान है, वही स्टेडर्ड है, वही मानदंड है।

कभी कभी मै सोचता हू कि हमारे दिमाग का स्तर क्या है। हमारे दिमाग का स्तर वही है जो हमारी भाषाओं का है और अगर हम यह समझें कि दूसरी भाषाओं को पढ़ने से हमारी बुद्धि का स्तर बढ़ जाता है तो हम बहुत गलती करते है। हमारी बुद्धि का स्तर नही बढ़ता, हम उसी स्तर पर रहते है। जब तक हमारा ज्ञान इसी धरती से नही उठेगा—जैसा कि मैंने आपको बताया कि गाधी जी ने कहा था कि अगर पाठ्य पुस्तकें नही हैं तो अपने ज्ञान और बुद्धि और अनुभव के बल पर पुस्तकों को अध्यापक लोगों को लिखना चाहिये—तब तक वह ज्ञान स्थायी नही होगा।

सरकार ने बहुत बड़ी योजना बनाई है करोड़ों रु० खर्च करने के लिये तैयार है, अनुवाद कराने के लिये तैयार है, मैं कहता हूं अनुवादों के लिये पैसा न खर्च किया जाय, हमें मौलिक रचनाओं पर खर्च करना चाहिये। हमारे अध्यापक और लेखक गलती भी करेंगे, लेकिन गलती के बाद उन गलती को सुधारेंगे भी और अगर नही सुधारेंगे तो यह धरती और इस धरती पर आने वाली पीढ़ियां उनको क्षमा नहीं करेगी। हम गलतियों से आगे बढ़ेंगे हम दूसरों का ज्ञान उधार नहीं ले सकते, ज्ञान उधार लेने से पैदा नहीं होता। गलतियां करने से ही ठीक रास्ता मिलेगा, गलत रास्ते पर चलते हुए आप ठीक रास्ता बना सकते हैं लेकिन न चलते हुए आप गलत जगह पर भी नही पहुंच सकते, आप उसी जगह पर मौजूद रहेंगे। इसलिये इस बात की जरूरत है कि पाच वर्ष का भी इंतजार न किया जाय फौरन से फौरन यह किया जाय कि प्रान्तीय भाषाओं में शिक्षा, परीक्षा और शोध के लिये सबको अवसर दिया जाय।

लेकिन साथ ही साथ जैसा कि यहा बहुत बार कहा गया है, इस बात का खतरा है कि अगर ये भाषाएं, प्रान्तीय भाषाएं, उच्च से उच्च शिक्षा का माध्यम बन जाती है तो फिर इस देश मे एक दूसरे के साथ विचारों का आदान-प्रदान करने के लिये क्या माध्यम होगा? पहले शायद इतनी आवश्यकता इस बात की नहीं थी, मगर जब प्रान्तीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बना दिया गया तो इस बात की आज फौरन जरूरत है कि परस्पर सपर्क माध्यम के बारे मे आप कोई निर्णय लें। क्योंकि बिना एक सम्पर्क भाषा के आपके देश इस की एकता नही रह सकती। हिंदी के बारे में आप यह समझ ले, मैं हिन्दी के बहुत से लेखकों की जानता हूं, उनका दृष्टिकोण जानता हूं, हिन्दी वाला कोई यह नहीं चाहता कि इस देश को एकता विखंडित हो। मुझे याद आती है "नवीन जी" की उन्होंने यह कहा कि हिन्दी इसी वास्ते मैं लाने के लिये कहता हूं क्योंकि मैं

समझता हूं कि वही एकमात्र भाषा है जिससे कि हम देश की एकता बनाए रख सकते है मगर अगर हमे किसी वक्त मालूम हो जाये कि हिन्दी इस देश की एकता को बिगाडने वाली है या इस देश की एकता को विखंडित करने वाली है तो मैं उसको पुरानी तावे गड़ देने को तैयार हू। इस देश की एकता, इस देश की यूनिटी यह सब से बड़ा सवाल है। मगर इस देश की एकता कैसे रहेगी ? जहा देश की सभी भाषाओं का विकास हो जायेगा वहा पर इस बात को फौरन ही जरूरत पड़ेगी कि आप उन्हे शिक्षा का माध्यम और परीक्षा का माध्यम बनाए। लेकिन आप सेक्रेटरिएट में चौदह भाषाओं में काम नही कर सकेंगे, चौदह भाषाओं मे आप कचहरियों में नही बोल सकेंगे, सुप्रीम कोर्ट में नही बोल सकेंगे और चौदह भाषाओं मे आप काम नही कर सकेंगे। आप कोई असम्भव कार्य मत उठाइये। जब इन चौदह भाषाओं मे या पन्द्रह भाषाओं में पढ़े लिखे लोग उच्च से उच्च शिक्षा प्राप्त कर आप के पास काम करने के लिये आयेंगे तो यह स्वाभाविक है कि वे कहेंगे हम तो जिस भाषा मे पढ़े लिखे हैं उसी भाषा में अपने विचार व्यक्त कर सकते है। उस समय आपकी ऊची नौकरियों में, आपकी संस्थाओं में, आपके संसद मे, हाई कोर्ट में, सुप्रीम कोर्ट में क्या हालत होगी। इस स्थिति को अगर आप सामने नही रखते, अभी से नही सोचते तो आप बहुत बड़ी गलती करते हैं। इस समय यह भी आपके लिये विकल्प नही रह गया है कि आप अंग्रेजी रखेंगे या हिन्दी रखेंगे। आपको कोई न कोई निर्णय अभी लेना होगा। जैसा श्री रामचन्द्रन ने कहा, मेरा खयाल है कि बहुत अच्छी बात उन्होंने कही है। आप इस बात को बहुत अच्छी तरह से सोच समझ कर और विद्वानों से परामर्श लेकर एक निर्णय पर पहुचिये और सही सा एक कदम उठाइये क्योंकि एक भाषा के बिना इस देश की एकसूत्रता नही रह सकती। जहा इस देश की भाषाओं का विकास निहायत जरूरी है, वहा यह भी बहुत जरूरी है कि ऐसी भाषा हो जिससे सारा देश एक सूत्र मे बंधा रहे इसका निर्णय आज ही करना है और इसमे अगर आप जरा भी आनाकानी करेंगे तो आप समझ लीजिए आप इस देश के साथ अन्याय करेंगे इस देश की जनता के साथ अन्याय करेंगे।

SHRIMATI LALITHA (RAJAGOPALAN) (Madras): Mr. Vice-Chairman, Sir, I have been hearing speeches made by various Members giving various shades of opinion regarding the Parliamentary Committee's Report. I am happy that we have taken up this Report along with the Report of the Education Commission. While taking a decision I would like the Government to go through both the Reports and evolve something which brings about a sort of compromise between all shades of opinion.

Mr. Vice-Chairman, at the outset I would like to say that on 15th August we are completing 20 years of freedom during which period the Government made great achievements, great strides in different spheres of our economy. In the matter of education also we have made very good progress. Sir, I come from a non-Hindi speaking area and I claim a fairly good knowledge of Hindi. As a language I have no objection to Hindi; I have love for it. It is a very sweet language. Some Members have expressed a sort of hatred towards English. I would say that this is not the way to develop a language. A person learns a language only through love. Unless there is that love and affection nothing can be achieved in this world.

In this connection may I point out that when Mahatma Gandhi visited South India and held his prayer meetings, thousands and thousands of people from different villages used to attend them. Though Mahatma Gandhi was proficient in English, he spoke only in Hindi and the people used to stay there for hours together and listen to him though they did not know the language. They did not

(Shrimati Lalitha Rajagopalan.)

agitate because they had so much of respect and regard for Mahatma Gandhi's ways. Mahatma Gandhi too had love for the Tamil language. He used to give his autograph in Tamil for which purpose he specially learnt Tamil. He used to sign his autograph charging Rs. 5 for the Harijan Welfare Fund. That created all the goodwill among the people which made them think that others are also trying to learn their language. That is the way to win over a person not by imposing anything on anybody. Then another thing I would like to point out is that the late Pandit Jawaharlal Nehru wrote his letters from his prison to his daughter in English and not in Hindi. He also wrote his "Discovery of India" in English and not in Hindi. That does not mean that Nehru was not proficient or eloquent in Hindi. He was very eloquent in Hindi I have heard him myself. But he wanted the whole world to know the glory of Indian History, the glimpses of our past glory and our heritage. So Nehru had such great love for English literature as well as for Hindi literature. So one should not think that English should completely be erased from our Indian History. This is a very wrong opinion and I do not want that attitude to be taken by the Government or by whoever is in the committee. I would like to request them to have a broad approach to these problems.

2 P.M.

Now, Sir, let me come to the Report. On page 2 of the Report "Adoption of Indian languages as media of education at all stages" is mentioned. In this connection, I would like to say that some Members have mentioned about switching over to the regional languages. Already every State has switched over to the regional language. They have got in very school the regional language as the medium of instruction as well as English. In Delhi, in Lady Irwin School, they have Bengali, Hindi and English as media of instruction. So the question of switching over to regional languages is not there. The question is about translation of text-books. And I would like to point out in this connection that the translation has not been up to the mark and many students are not getting the books they want in the regional languages. For instance, my daughter was studying in the English medium and she had to do arithmetic in Hindi. She had to translate it into English and then do it. So this is the position. And if we are going to have the three-language formula. I think the work of translation of books should be completed and translations of all text-books should be made available.

Then, with regard to Medicine, Engineering, Tehnology and other scientific spheres, I agree with the opinion expressed by others that the medium should be English. We have to accept facts as facts. We cannot translate all these things, as we imagine it possible, within a period of five years. Let us not have any time-limit. But let us try to translate them. Let us not say that English should be removed immediately. If we want to have outside contact and if we want to have international co-operation and international understanding, I think this attempt will not help us.

Then, Sir, as far as examination is concerned, on page 14 it is stated:

> "The examination certificate should give the candidate's performance in different subjects for which he has appeared but should not declare him to have passed or failed in the examination as a whole; and his eligibility for admission to courses at the next stage should be dependent upon his performance with reference to the requirements prescribed for the course he desires to study."

I think that this indirectly says that there should be no examination system at all. I do not agree on this point, that there should be no examination system at all, because the

standards will go down and students will not be able o take up the courses that they want. Let a student take as optional whatever subject he des res to take and then specialise in that subject; and if he gets very high marks, preference can be given to him in regard to admission in those subjects in the higher stages. I do not totally agree with the idea of abolition of the examination system and giving of only certificates. Then, Sir, on the same page it is said that there should be a common text-book to be read by school students all over the country. But it is a pity that Education, Food and Agriculture and Health are all State subjects. For example, each State follows its own policy regarding Food and Agriculture. When we put questions to the Minister, he says that it is a State subject and he cannot say anything further than that. And we see the plight we are in. So in this connection, I cannot understand how you can have a uniform policy for all the States and how you can have a uniform text-book. Some people may say that there must be a link language. I do agree that there must be a link language and I agree that Hindi to a certain extent—I will not say that it is completely fit for the purpose of being the link language—can be the link language provided it is developed and no time-limit is set. Unless this is done first, how can you have a uniform policy and a common text-book? A common text-book is very good; I quite appreciate that attitude. If a student from Madras comes to Delhi and wants to join a school here, he must have a common text-book; otherwise, he will have to face difficulties. But I want to know how Government is going to do this when every State is following its own policy regarding publication of text-books? I would like the Education Minister to go into this matter and tell us how he is going to evolve a solution for this.

Then, I will come to the neighbourhood schools. Perhaps the idea of the Report is that there should be a sort of socialistic pattern of society. I do agree with this idea and the Congress is aiming at a socialistic pattern of society. But a socialistic pattern of society is not a bed of roses and the path is really complicated. These public schools that are there are doing a tremendous work in the sphere of education and one cannot deny that because they are supplementing the Government schools and those who are not able to get admission in Government schools are able to get admission in the public schools. So you must look at thtm from the educational point of view. I would request the Education Minister to look at it from the educational point of view. I am not objecting to the neighbourhood schools but let them first be tried on an experimental basis and if we find that it is a success, then I am prepared to accept that public schools should go.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI AKBAR ALI KHAN): You must finish now.

SHRIMATI LALITHA (RAJAGOPALAN): One more minute. Lastly, I cannot but again mention Pandit Jawaharlal Nehru who was a very farsighted man and who looked at things from a broad viewpoint; he never looked at things from a narrow angle. In regard to Goa, Daman and Diu, he gave ten years' time for the people to decide about their future. But we in a hurry brought in a Bill and took the consensus of opinion of the people and that opinion went against merger. Regarding language also, he gave an assurance to the non-Hindi-speaking people that English will remain as an associate official language so long as the non-Hindi-speaking people want it. If only we had given this assurance legal implications prior to the general elections, things would have been much different and this agitation would not have been there. Mr. Ramachandran talked of a Hindi India and an English India. My friend, Mr. Parthasarathy

(Shrimati Lalitha Rajagopalan.)

spoke of balkanisation of India. And if we are not going to give proper thought to the whole thing and evolve something which will satisfy the non-Hindi-speaking people, who constitute 60 per cent of our population, I think we may in future have a continental India. Thank you.

SHRI GANGA SHARAN SINHA: On a point of information. While Shri Jawaharlal Nehru wrote his letters to his daughter in English, in one of his letters he had expressed regret that he was writing in English, that he was not in position to write in Hindi. I just wanted to remind her about it.

पंडित भवानी प्रसाद तिवारी (मध्य प्रदेश) : उपसभापति जी, मैं, जो रिपोर्ट पेश की गई है, उस पर कदाचित आखरी भाषण दे रहा हूं। जो शिक्षा आयोग का प्रतिवेदन प्रस्तुत हुआ है, वह भी बडे श्रम से तैयार किया गया है और प्रदेशो में घूम घूम कर के और लोगों की राय इकट्ठी कर के एक ग्रन्थ हमारे सामने आ गया है। कुछ लोगों ने ग्रन्थ की विशालता की आलोचना की। परन्त इसमें कोई सन्देह नहीं है कि देश नीचे से उठ कर उस जगह पर आ गया है, जहां से मार्ग दर्शन आगे के लिये किया जा सकता है। असल मे उसी आधार पर तो यह संसद् के सदस्यों की समिति का यह प्रतिवेदन हमारे सामने आया और एक निचोड के रूप मे आया, एक संकल्प के रूप में आया, सूत्रों मे आया, और उसका एक व्यवहारिक रूप भी उपस्थित हुआ।

जब शिक्षा की बात सामने आती है और उसके आधार पर नई पीढी बनाने की बात की जाती है, तो यह बडी मोटी बात समझने की है, जो संस्कार युगों युगों से चले आ रहे है, उनमे से कुछ तो जड हो गये और वे समाज को गति नही देते, उसे पीछे ढकेलते हैं, कुछ सस्कार ऐसे है, जिन का उपयोग कर के, जिनका नवीनीकरण कर के समाज को गतिवान किया जा सकता है और इसलिये यह आवश्यक है कि ऐसा माध्यम खोज जाय कि जिसकी नई पढ़ाई शुरु होनी हो, उसमें पुराने जड़ीभूत जो सस्कार है, वे न आवें और वह ऐसे नये संस्कार अपना सके कि वह स्वयं भी समाज को गति दे सके। मैं समझता हूं कि इसका दिशादर्शन इस प्रतिवेदन में बहुत स्पष्ट हुआ है।

जिन्हे पडोसी स्कूल कहा गया है या पड़ोसी शालाएं कहा गया है, उनके सम्बन्ध मे आलोचना हो रही है। परन्तु यह बात किसी ने नहीं काटी कि जब ये शालाएं चलेगी, तो जो आज विषम वातावरण है, विद्यार्थियो के पढने की जो विषम अवस्थाएं उन्हें प्राप्त होती है, जो पुराने सस्कार नीच ऊंच के समाज ने बनाकर के रखे थे और जो अब भी चले जा रहे है, गोकि हम लड़ रहे है उनसे, और जो अंग्रेजों के जमाने में नये संस्कार बने और जो ये धनी और दरिद्र की विषमता के बुरे संस्कार आये, इनको पोछने का एक ही तरीका है कि जो प्रारम्भ में विद्यार्थियों को शिक्षा दी जाय, उसमें ये विषमता के सस्कार न आने पायें, एक सी अवस्था उनको मिले पढने की और समता की सुविधाए सबको प्राप्त हों। अलबत्ता जो लोग आगे चल कर विदेशों मे पढ़ना चाहें, उनको ऐसे मौके हों और वे अन्य भाषाएं पढ़ें। परन्तु हमारे यहां का प्रारम्भ यदि इस प्रकार के स्कूलों से न हो, जिनमें विषमता न हो, तो फिर हम संस्कार बनाने में कैसे सफल हो सकते है।

वह जो मतभेद की टीप है महन्त दिग्विजयनाथ की, सचमुच मे उन्होंने प्रसन्नता की की बात नही कही। यदि इस प्रतिवेदन में जो कि संसद सदस्यों की समिति का प्रतिवेदन है, इसकों अगर बारीकी से देखा जाय, तो जहां चरित्र निर्माण की बात कही गई है, वहां पर यह स्पष्ट है कि उसके आधार पर शिक्षा की अन्य चीजों

के साथ विभिन्न प्रकार की जो धार्मिक सुविधाएं यहां पर है, उनका समादर करते हुये चलना है, यह बात उसमें स्पष्ट आ गई है । मेरी अपनी समझ मे भी यह बात आती है कि एक विदेशी शब्द "सैक्युलर" को ले कर के बहुत भ्राति इस देश में चल रही है और शिक्षा शास्त्रियों का यह भी एक कर्त्तव्य है कि यह "सैक्युलर" और उसका अनुवाद धर्मनिरपेक्ष जो है, यह जो भ्राति पैदा कर रहा है, इसकी सफाई हो जाना आवश्यक है । हमारे यहां सर्वधर्म समादार का भाव आगे से चला आ रहा है और भविष्य मे भी इसी के अनुसार चलना है, और यही पद्धति होनी है, हमारे यहां नैतिक शिक्षा की या अन्य प्रकार की शिक्षा की या सास्कृतिक शिक्षा की ।

जैसे अभी डा० बच्चन कह रहे थे कि जो हमारी भूमि की संस्कृति है या सास्कृतिक आत्मा है, उसके सम्बन्ध में भी स्पष्ट संकेत इस प्रतिवेदन में हैं । जो विविधता की एकता है यह स्वरूप अनेक दिनों से हमारी संस्कृति का चला आ रहा है, बीच बीच में अनेक कारणों से यह क्षीण होता है, इसे पनः प्रतिष्ठित करना चाहिये और इस सिद्धान्त पुर अगर हम देखेंगे कि प्रतिवेदन में क्या निश्चय किया गया है, क्या रूप उसका स्थिर किया गया है तो आप देखगे कि अपने-अपने क्षेत्र में अपनी अपनी भाषा हो, उसे पूर्ण विकास की सुविधा हो, वह शिक्षा का माध्यम बने, यह एक प्रकार से विविधता के रूप की स्वीकृति है और इसको हमने हमेशा से स्वीकार किया है । इसमें क्या झंझट पैदा हो सकता है । यह तो बड़ी ठीक सुविधा हमने स्वीकार की है । भारतवर्ष ऐसा देश है कि यहां की सांस्कृतिक आत्मा जो है, वह एक होते हुये विविधता की है और उस विविधता के स्वरूप को अभी तक हम पूरी तरह से स्वीकार नही कर पायेथे --असल में यही झंझट था-आज हम उसे स्वीकार करने जा रहे है । और यह हमारा एक शुभ निश्चय है, हां, अलबत्ता इस विविधता को स्वीकार करते हुये, इस विविधता में क्या एकता हो, उसका भी इसमें स्पष्ट संकेत है और वह संकेत यह है कि एक भाषा ऐसी तो होनी ही चाहिये, जिसको कि हम भारत की भाषा कह सके ।

मुझे याद है कि कुछ दिनों पहले रूस से एक कल्चरल अटैची आये थे । बारान्नि-कोव उनका नाम था । वे जगह जगह घूमते थे और सब जगह चुनौती देते फिरते थे । उनके रग रूप से उनके पास जो बैठता था वह अग्रेजी मे बात शुरू करता था । वे तुरन्त स्पष्ट हिन्दी में उससे पूछते थे कि भाई, आपकी अपने देश की कोई भाषा नही है, जिसमें आप बातचीत कर सके । वे स्वय हिन्दी पढे थे, हिन्दी मे सीखे थे और वे इस प्रकार की चुनौती ले कर के फिरते थे, यह तो एक उदाहरण है, पर यह चुनौती सचमुच मे है कि हम देश की भाषा किसे कहें । जाहिर है कि जो ज्यादा से ज्यादा लोगो के बोलने की भाषा है और अपने आप है, बिना किसी दबाव के है और दूसरी स्थिति उसकी यह है कि वह मध्य देश की है, और दिशाओं की ओर उसका प्रसारण संभव है, होता है, हो रहा है और जिसके लिये कोई दबाव की आवश्यकता नही है । ऐसी स्थितियों मे कुछ लोग ज्यादा चिल्ला चिल्ला कर के ऐसी स्थिति पैदा कर देते है कि विरोध होने लगता है । असल मे भाषाओं के बीच में विरोध का प्रश्न ही नही है ।

भाषाएं तो केवल माध्यम मात्र है । उनके स्वरूप हमेशा बदलते रहते है, बदल जाएंगे और कोई एक भाषा या उसके स्वरूप का ठेका नही ले सकता और उसके सम्बन्ध मे कोई बात नही कह सकता , उसे तो स्वत: विक-सित होने दिया जाय, बिना दबाव के भाषा फैलती है, ढ़ती है । अब आप देखे कि कितनी समृद्ध भाषा सस्कृत थी । जैसा डा० बच्चन ने कहा, किसी जमाने मे वह बोलचाल की और अभिव्यक्ति की भाषा रही है और वह उन्नति के शिखर पर पहुच

[श्री पंडित भवानी प्रसाद तिवारी]

गई, पर वह बाद में वैसी नही रह गई। बाद मे ऐसी परिस्थितिया पैदा हुई कि बुद्ध को अपने जमाने मे स्वय यह कहना पड़ा कि साहित्य का सृजन जन-भाषा मे करो। उस वक्त की जो जन-भाषा थी, उसमें साहित्य के सृजन की उन्होने आज्ञा दी और उस समय बहुत से ग्रन्थ उस भाषा में लिखे गए।

[THE DEPUTY CHAIRMAN in the Chair.]

इसलिए यह आवश्यक है कि इस पर बहुत झंझट में न सोचे। स्वाभाविक रूप से यह स्थिति पैदा ही होनी चाहिए कि जब प्रत्येक क्षेत्र अपनी भाषा के विकास और उसके सम्मान के लिए प्रयत्न करे, तो पूरे देश के अन्दर एक भाषा हो। नीरेन घोष जब भाषण कर रहे थे, तो उन्होंने एक गलत बात कही। उन्होंने कहा कि रूस में किसी एक भाषा को महत्व नही है, सब अलग-अलग भाषाए चलतीं है। जो लोग रेडियो वगैरह सुनते है, वे जानते है कि वहां से जो उनके अपने देश की भाषा है, उसके पाठ पढ़ाए जाते है और सिखाए जाते है। तो एक भाषा भी वहा है और विविध भाषाए भी वहा है।

डा० हरिवंश राय बच्चन : एक भाषा सब जगह बोली जाती है।

पंडित भवानी प्रसाद तिवारी : हा, एक भाषा सब जगह बोली जाती है। तो इस तरह से मुझे यह समझ में आता है कि इस प्रतिवेदन मे स्पष्ट विषय दर्शन है।

एक बात जरूर आपकी इजाजत से, माननीय, मैं कह दू। जब शालाओं का स्वरूप बने, तो इस एक बात को सोचने की आवश्यकता है। आजकल पाठशालाओं में और महाविद्यालयों में विद्यार्थियों की इतनी सख्या होती है कि गुरु और शिष्य का सम्पर्क हो ही नही पाता, व एक दूसरे को पहचानते ही नही है और एक तरह से वहां ऐसी परिस्थिति रहती है जैसे कि फैक्ट्रीज मे मजदूर इकट्ठा काम करते हैं, इकट्ठे सबक लेने चले जाते है और लौट आते हैं। इसलिए इस दृष्टि से सोचना चाहिए कि जो भी शालाएं आप आगे चलावें, चाहे उनका नाम पड़ोसी स्कूल हो या जो भी हो, उनमें विद्यार्थियों की संख्या निर्धारित कर दी जानी चाहिए कि इससे अधिक न हो, जिससे कि पढाने वालों का सम्पर्क उनसे बना रहे और चरित्र निर्माण में सहायता मिले। यह बात इसमे स्पष्ट कही गई है कि शिक्षकों को सम्मानित स्थिति में रखना चाहिए, उनकी आर्थिक स्थिति भी अच्छी बनाई जानी चाहिए, उनको स्वतंत्रता दी जानी चाहिए कि वे अपनी यूनियन वगैरह बनाएं और पुस्तकें वगैरह भी लिखे। इस प्रकार अनेक दिशाएं इसमें है। आशा है हम आगे चलेंगे। इसमे ही वह बीज निहित है, जो आगे बढ़ेगा। हम अनेक झंझट करते रहे लेंग्वेज के सम्बन्ध में, किसी निर्णय पर नही पहुंचे। शायद ठीक कहा मंत्री जी ने उस निर्णय पर पहुंचने में हमे इन रिपोर्ट से सहायता मिलेगी।

धन्यवाद।

[THE DEPUTY CHAIRMAN in the Chair.]

THE DEPUTY CHAIRMAN: I have four more names before me. Now Mr. Ansari will speak. Each Member will take ten minutes.

AN HON. MEMBER: And when will the Minister reply?

THE DEPUTY CHAIRMAN: The Minister should have replied at 2.30. Now he will reply some fifteen or twenty minutes later.

SHRI GANGA SHARAN SINHA: Four speakers means forty minutes.

THE DEPUTY CHAIRMAN: I would request them to be brief. If everyone had observed the time-limit we would have finished by now.

श्री हयातुल्ला अन्सारी (उत्तर प्रदेश): मैडम डिपुटी चेयरमैन, बहुत थोडे पाइन्ट्स है, जिन पर मुझे बोलना है ।

उपसभापति : रिपोर्ट करने की जरूरत नहीं है, जो नए पाइन्ट हों वही कहिए ।

श्री हयातुल्ला अन्सारी : जो बोला जा चुका है उस पर मैं नहीं कहूंगा । लिन्क लेंग्वेज के ऊपर बहुत कुछ कहा जा चुका है और मैं इससे इत्फाक रखता हू कि हिन्दी ऐसी जबान है, जिसे हिन्दुस्तान की लिन्क लेंग्वेज बनना चाहिए और बन रही है—साथ साथ मैं कह दूं कि है । मैं एक मिसाल देता हू । जिस जमाने में एन्टी-हिन्दी मूवमेंट चल रहा था मद्रास में, मैं वहीं था । जिस वक्त यह एन्टी-हिन्दी मूवमेंट चल रहा था, उसी जमाने में चार सिनेमा हाउसेज में उर्दू-हिन्दी पिक्चर चल रही थीं और वे रात भर भरे रहते थे । दिन में वही लोग एन्टी-हिन्दी मूवमेंट चलाते थे और शाम को सिनेमा हाउसेज में बैठ कर हिन्दी-उर्दू पिक्चर देखते थे । वह चीज मेरे सामने है ।

अंग्रेजी के सिलसिले में भी कुछ जरूर कहूगा । यह कहा गया कि अंग्रेजी हमारी भाषा नहीं है, हर मुल्क में अपनी भाषा होनी चाहिए, मैं इन बातों से पूरा सहमत हू इत्फाक रखता हू हमारा मुल्क बहुत बड़ा मुल्क है, उसके बराबर का कोई मुल्क नहीं, उसमे बड़ा कोई मुल्क है तो चीन है । जो कमीजें काटी गईं इगलैंड के लिए, अमरीका के लिए, वे हमारे बदन पर नही आ सकतीं । हमारे प्राबलम दूसरे हैं । एक छोटे से प्राबलम का मैं जिक्र कर दू । अभी लाइब्रेरी मे जियालोजी का केटेलोग देखा, वह 500 सफे का होता है और हर तीसरे महीने निकलता है । उस केटेलोग में दो हजार किताबों के नाम होते है, जो जियोलोजी के ऊपर निकलती हैं । जियोलोजी के हर सैक्शन में 50 किताबे है; एक्सपर्ट को दो या तीन की जरूरत होती है । जियालोजी मे 500 या 2,000 किताबें छाप लेना हिन्दी के अन्दर बहुत मुश्किल काम है । क्या केटेलोग भी छप सकता है तीसरे महीने में ? हमें सिर्फ एम० ए०, बी० ए० तक ही नहीं पढ़ना है; हमें एक्सपर्ट की जरूरत है । मैं नहीं कहता कि एटम बम की जरूरत है, लेकिन एटम बम के एक्सपर्ट्स की हमें जरूरत है, इलेक्ट्रिक मेगनेटिज्म की हमें अभी जरूरत न हो, लेकिन उसके एक्सपर्ट्स की, उसके जानने वालों की जरूरत है । एक्सपर्ट्स कहा से आएगे । एक सीढ़ी है, उसके बाद दूसरी स्टेज है, हाई स्कूल के बाद इन्टरमीडिएट आता है, उसके बाद बी० ए०, एम० ए० और उसके बाद रिसर्च आती है, उसके बाद एक्सपर्ट आते हैं । किसी भी लेंग्वेज को ले लीजिए, मै तेलगू को लेता हू, तेलुगू मे क्या हर महीने 5 हजार किताबें छप सकती है, जिनकी सेल सिर्फ दो-तीन की हो; क्योंकि एक्सपर्ट्स को दो-तीन की जरूरत होती है । इजीनियरिंग एक्सपर्ट्स कितनी तरह के होते है । जमीन कैसे खोदी जाय इसका भी एक्सपर्ट होता है । आप बना सकते हैं ? उनको छोड़ कर हम कहां रहेंगे ? हमको एक्सपर्ट्स की जरूरत है, हमको ऐसे आदमी चाहिए जो मुल्क को ऊचे ले जाये । सब चीजों में हमें एक्सपर्ट्स की जरूरत होती है । लड़ाई होती है तो हम कहा से लाएगे बारूद का एक्सपर्ट, गन का एक्सपर्ट, एलकोहल का एक्सपर्ट, एटम बम का एक्सपर्ट । वह दिन हम नहीं देखना चाहते । ठीक है लिन्क लेंग्वेज हिन्दी होनी चाहिए, लेकिन अंग्रेजी छोड़कर हम कहा रहेंगे । मैं एक छोटी सी मिसाल देता हू । चन्द साल पहले मैं रुड़की यूनीवर्सिटी गया था । वहा के एक प्रोफेसर से मिले —हम सब प्रो-हिन्दी थे —हमने उन एक्सपर्ट से पूछा कि यह बताइए कि कितने दिनों के बाद आप अपना मीडियम आफ इन्सट्रक्शन हिन्दी कर देंगे, उन्होंने जवाब दिया कि थोड़ी देर मेरे साथ आइए । वे हम लोगों को इस

[श्री हयातुल्ला अन्सारी]

हाल के बराबर के एक हाल में ले गए, वहां किताबें भरी हुई थीं, उन्होंने कहा कि सच पूछिए तो उस वक्त मीडियम आफ इंस्ट्रक्शन हिन्दी बना सकते हैं जब ये सब किताबें हिन्दी में ट्रांसलेट हो जाय। हम लोगों ने कहा कि 15 साल में हो जायेगी तो उन्होंने कहा कि 15 साल की बात न कीजिए, 15 साल में इतनी किताबें और आ जायगी। यह रेस है, दुनिया की दौड़ है एजूकेशन में, इल्म में, एक्सपर्ट में। समझ लीजिए हिन्दी को लिन्क लेंग्वेज बनाना है लेकिन उसके साथ ही भारत का स्तर ऊंचा करना है और उसके लिए एक्सपर्ट्स को नहीं छोड़ना है, इल्म को नहीं गिराना है, साइन्स को नहीं गिराना है। समझ लीजिए कहां हमें जाना है। बहुत बड़ी रेस है, बहुत पीछे से हम दौड़े हैं और आगे हमें जाना है।

दूसरी बात उर्दू के लिए कहूंगा। गगा जी चले गए, उन्होंने बहुत अच्छी बात कही कि जगह जगह इसमें कह दिया गया है कि एक अच्छा कन्सीडरेशन होना चाहिए माइनारिटी लेंग्वेज के लिए और कहा भी है इसमें। मगर मैं बताऊं कि 20 साल में मेरा तजुर्बा यह है कि आजकल जब फांसी की सजा पालिटिक्स में दी जाती है तो उसके लिए कहा है कि यह अच्छी चीज है, इसके लिए ऐसा करना चाहिए। बस, वह खत्म हो जाता है। 20 साल से देख रहा हू। 1948 में इन्डिपेंडेन्स मिलने के बाद एजूकेशन डिपार्टमेंट ने यह हुक्म निकाला कि भारत की स्टट की जबान हिन्दी हो गई है, इसलिए एजूकेशन हिन्दी में होगी, लेकिन अगर कोई स्टूडेन्ट उर्दू में पढ़ना चाहे तो उर्दू में अवश्य पढ़ा दिया जाय। इतनी अच्छी फ्रेजोलोजी दे दी, सब उर्दू खत्म हो गई। स्कूलों में जितने बच्चे थे, जिनकी मदर टंग के खाने मे उर्दू लिखा हुआ था उसे काट कर हिन्दी कर दिया गया, ओवर नाइट एक बच्चा नहीं रहा उत्तर प्रदेश में जिसकी मादरी जबान उर्दू हो। गगा जी चले गए, यह बहुत खूबसूरत है :

"Adequate safeguards should be provided for linguistic minorities."

इसके माने फिनिश्ड। आप क्या सोच नहीं सकते है कि क्या प्रोवाइड करेंगे, कैसे प्रोवाइड करेंगे, क्या प्राबलम है, 20 साल तक स्टडी किया उर्दू के लिये लेकिन मालूम नहीं हुआ कि क्या प्राबलम है। तो फिर फिनिश हो गई उर्दू। आगे कहते है

"Only one language, *viz.*, the medium of education, should ordinarily be studied in the first substage of school education covering four or five years. Facilities should be provided, on an optional basis, for the study of regional language when it does not happen to be medium of education."

तो अगर हमारे यहा बच्चे उर्दू मे पढ़ते है, तो फिर हिन्दी मे उनको कैसे पढ़ाया जायगा। क्या यह कह देना काफी है कि फैसिलिटीज शुड बि प्रोवाइडेड ? क्या आप समझते है कि इतना वेल टाइट आर्गेनाइजेशन है कि आप कह दे और काम चल जायगा, बड़ी मेहनत पड़ेगी रूल्स को ले डाउन करने के लिये। इसके माने यही है कि अगर बच्चा उर्दू लेना चाहता है तो उसे हिन्दी पढ़ने का मौका नही मिलेगा। उसको सेकेड स्टेज पर मडेनली हिन्दी मीडियम से पढ़ना है। फैसिलिटीज शुड बि प्रोवाइडेड के कोई माने नही है, इट मीस प्रैक्टिकली नथिंग। सेकेड स्टेज पर आने पर जब मीडियम हिन्दी म चेज होगा तो फिर वह बच्चा जाहिल ही रह जायगा, मुश्किल से क, ख, ग, घ, जानता होगा। इसके माने है कि उर्दू खत्म कर दो।

अब, आप कहते है कि यूनीवर्सिटीज को चार्सेज दिये जायेंगे कि जो किताब चाहे ट्रास्लेट करे। कही है ऐसी यनिवर्सिटी ? उर्दू की कोई यनिवर्सिटी है ? जो सेंट्रल

यूनिवर्सिटी है वह हिन्दी की हो जाय, जो मुसलिम यूनिवर्सिटी है वहा इगलिश हो जाय, कौन करेगा उर्दू के लिये, बनाई है कोई यूनिवर्सिटी, बनेगी कहा पर ? तो प्राइमरी स्टेज पर उर्दू खत्म, सेकेंडरी स्टेज मे उर्दू खत्म और यूनिवर्सिटी स्टेज मे उर्दू खत्म, तो यह डेथ वारेंट है फार उर्दू, इसमे कही कोई चीज नही रखी है । पूरा केस आपके सामने रखा हुआ है, 20 साल से हम उसके लिये लड़ाई लड़ रहे है । उर्दू के लिये रामचन्द्रन जी ने कहा है कि बहुत पालिश्ड लेगुएज है, अगर वह होते तो मै बताता कि कितनी पालिश्ड लेगुएज है । तीन तीन, चार चार लफ्जो मे शेर कहा गया है । जिसको एक बार कंडेम किया गया उसी को ऊपर चढ़ा दिया, वेदांत का शेर है गालिब का कहा हुआ

न हम थे तो खुदा था, हम न होते तो खुदा होता ।
डुबोया मुझको होने ने, न होता मै तो क्या होता ।।

सिर्फ खुदा का लफ्ज था जिसको कह कर सब कुछ कह दिया, सारा वेदात आ गया । तीन लफ्जों मे पूरा का पूरा शेर है : तोबा तोबा शराब से तोबा । पहले मे कडेम कर दिया दूसरे म चढ़ा दिया, तोबा तोबा शराब से तोबा, तीन लफ्ज है । 1857 ई० के लिये किसी शायर ने कहा है, पूरा बैकग्राउड उर्दू के लिट्रेचर का है, उस जमाने मे जबान बन्द थी, कोई कह नही सकता था—कहा है.

कैसे कैसे ऐसे वैसे हो गये,
ऐसे वैसे कैसे कैसे हो गये ।

तो पूरा उर्दू लिट्रेचर का बैकग्राउंड ऐसा है, जिसको कंडेम किया उसको चढ़ाया, जब तक ऐसे वैसे के माने न मालूम हों उर्दू लिट्रेचर नही समझ सकते ।

देखिये कोई पर्शियन का लफ्ज है:

मक्का गये मदीना गये कर्बला गये,
जैसे गये थे वैसे ही हिरफिर कर आ गये ।

पूरा कंडेमनेशन ह, कितना टाट है, कितना सरकाज्म है, लेकिन एक लफ्ज भी पर्शियन का नही है, लेकिन इसमे होल लिट्रेचर का बैकग्राउड है, सैवेन हंड्रेड ईयर्स का बैकग्राउंड है । इसको कडेम कर के रख दिया । रामप्रसाद बिसमिल ने इसी पर अपना रोना रोया फासी के तख्ते पर चढ़ा दिया गया, हर एक की जबान पर यह चढ़ा हुआ है:

सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है ।
देखना है जोर कितना बाजु-ए कातिल मे है ।

कभी इसको भुला सकते है । जब सिराजुद्दौला ने रामनारायण महजू से कुछ कहा तो उन्होंने चिल्ला कर पगड़ी फेक दी और कहा :

गजाला तुम तो वाकिफ हो, कहो मजनू के मरने की ।
दीवाना मर गया आखिर को, वीराने पर क्या गुजरी ।।

किसी हिन्दू ने लिखा, किसी मुस्लिम ने लिखा ।

त्रिलोकी सिंह जी बैठे हुये है, इन्होंने बतलाया कि इनके यहा एक लेडी विधवा हो गई, वह सिर्फ उर्दू जानती थी, उन्होंने कहा कि हिन्दू धर्म को पढ़ने के लिये किताबे ला दो, तो उन्हे उर्दू मे इतनी किताबे मिली कि सारी जिन्दगी भर पढ़ती रहे तो भी खत्म न हो, सब किताबे हिन्दू धर्म को उर्दू मे है । रामचन्द्रन जी नही है, एक किस्सा बताता हूं । वह आये थे लखनऊ मे, बेसिक एजुकेशन कमेटी मे आये थे, तो उर्दू का डेपुटेशन उनसे मिलने के लिए गया, उसमे मै था, मेरी वाइफ थी और उस समय हमारे जो प्रेसिडेंट थे, वह थे रामलाल वर्मा, दो तीन और मेम्बर थे । बड़ी बातचीत हुई, एक मेमोरेंडम भी दिया । तो उन्होंने मुझे समझा कि मैं कोई काश्मीरी पंडित हू, मैंने कहा कि नहीं भाई मैं यह नहीं हूं, मेरी वाइफ को समझा कि यह पंजाबी रिफ्युजी गर्ल है जो कि वहां से पंजाब से भाग कर आई है, खैर वह बात भी खत्म हो गई, जब सब बात हो गई, मजाक खत्म हुआ, जब सब बिल्कुल खत्म हो गया तो कहने लगे कि भाई आपके जैसा मुसलमान होना चाहिये

[श्री हयातुल्ला अन्सारी]

हिन्दुस्तानी में, रामलाल वर्मा से यह कहने लगे तो उन्होंने बताया कि मैं मुसलमान नहीं हूं । वह होते तो बताता कि तीन गल्ती उन्होंने की । तो बाद में उन्होंने कहा कि उर्दू लिट्रेचर ही चीज दूसरी है । मैं सच कहता हूं कि यही वह ज़बान है जिसके बोलने वाले ज्यादा से ज्यादा स्टेटस में मिलेंगे, बंगाली को ले लीजिये, मलयालम को ले लीजिये, तेलगू को ले लीजिये, तामिल को ले लीजिये, सब जगह उर्दू के बोलने वाले मिलेंगे, और सब से ज्यादा मज़हब में इसके बोलने वाले, पढ़ने लिखने वाले मिलेंगे, क्रिश्चियन में मिलेंगे, हिन्दू मिलेंगे, सिख मिलेंगे, ईसाई मिलेंगे, पारसी मिलेंगे, सब के बुजुर्गों की तारीखें इसमें मिलेंगी । अब इसके बाद मैं क्या बताऊं । एक इलजाम लगाया जाता है कि यह फारेन लंगुएज है, खैर उसको जाने दीजिए, एक इलज़ाम यह लगाया जाता है कि यह फारेन लिपि में है । मैं लिपि के बारे में कहूंगा । हां, फारेन लिपि है, 28 अक्षर हैं जो कि बाहर से आये हैं लेकिन 9 ने अपनी साउंड खो दी है, ऐन ग़ैन अब नही बोला जाता है, फ़े नहीं बोला जाता है, हमज़ा नही बोला जाता है, वह सब खत्म हो गया । हम हमज़ा बोल नहीं सकते है । फिर बहुत से अक्षर यहां के उसमें मिल गये, ब, फ, भ वगैरह आ गये । एक किस्सा है, एक मौलवी साहब एक पंसारी साहब के पास गये और कहा कि अफ़ग़ाना दे दो, पंसारी घबड़ा गया लेकिन उसको तो बेचना था, उसने कहा कि है तो लेकिन वह इतना गाढ़ा नही है । तो हम तो उन सब साउंडस को खो चुके हैं, हमारे कान उसके आशना नही रहे हैं । सब कुछ बदल चुका है । लेकिन आपने रेडियो तो एक्सेप्ट कर लिया है, साइंस एक्सेप्ट कर लिया है, सारी टर्मानालाजी एक्सेप्ट कर लिया है, सब कुछ फारेन एक्सेप्ट कर लिया है लेकिन उर्दू के 28 अक्षर एक्सेप्ट नहीं होते ।

(Time bell rings)

अच्छा मैं खत्म करता हू । इतना ही कहूंगा :

जो छिपा आया था न छिपेगा
वे कातिल न बन लड़का
वफादारों के खूनों का दाग
यह धोपा है कहां से ।

DR. M. M. S. SIDDHU (Uttar Pradesh): Madam, as far as the Education Commission's Report and the Parliamentary Committee's Report are concerned, the policy that has been enunciated is nothing new. It has been there in the Preamble, in the objectives, enshrined in the Constitution. Then the question can rightly be asked: what is the use of reiterating it today? Why do we reiterate it? And I ask the Government this question. Have they the will to act upon what they talk and discuss today? Has the will been lacking for twenty years and today has anybody come forward with dedication and determination saying that he will act upon it? I do not see either the will or the determination.

We are talking of the medium of instruction; a lot of discussion has taken place on this medium of instruction but none has said that the medium of instruction should not be mother tongue. None has said so. Then why do we not come forward and say that mother tongue will be the only medium of instruction? Well, some objections have been raised that we will not have scientific terminology in in the mother tongue. It is wrong to say that. If you were to go to a University and ask there what books the students are studying, you will find they are studying the cheap notes, the bazar notes. Such notes are available and nobody cares to go to the books. When you think in terms of higher research, the persons who have to do higher research must not only know English but they must also know French, German, Russian, Esperanto and other languages. At one time it was an essential condition that nobody will be award-

ed the Ph. D. Degree unless and until he has received a diploma either in French, Latin or German language. So if anybody wants to do research he has not to depend either on Hindi or English alone; he has to know some other languages. So when people say that thousands of books have to be translated so that at the University stage the boys can make use of them, I say it is not necessary. Those who are going for research will learn other languages, those who are not going for research need not read them. So there is no need to translate all the books

As far as text-books are concerned, we have been for the last twenty years talking about text-books written in English being translated into Hindi or otherwise. Has anybody asked how a nation is created? Take, for example, Israel From which country did they come? What mother tongue did they speak? They spoke German, French, Esperanto and English. What is the medium of instruction in their university? Hebrew. If there is the will of the nation, if the people are determined, they can create a nation and they can create and revive a dead language. Have we that determination today? I ask, does our leadership possess the determination to give a lead to the people? If we can give it today, neither a period of five years nor a period of ten years is needed. We need to act and we cannot wait for tomorrow. Otherwise, the reactionary, retrograde vested interests will not allow you to go forward Then, what is it that we need? Why is it that our professors have not been able to evolve a new dictionary? Why is it we have been talking about adaptation and adoption of terminology? Why cannot we have the international terminology as such? Till the year 1934 or 1935, as far as medicine is concerned, all the words were in Latin and Greek. The names of the blood vessels, the names of the organs, the names of bones were not in the English language. They were only in Latin. It is only during the last twenty years or so they have been translated into English. Were Englishmen fools to think that they should be translated into English then and there? No. With whatever tools are there, you do it.

Then, may I ask you whether you have asked your teachers in the universities in what language they want to teach? If you do not have the tools to teach, please for goodness's sake do not put this limit of five years or ten years. Ask the opinion of the teachers as to whether they want to teach in English or in the regional language or in Hindi. If they do not want to teach in anything but English, say goodbye to them. Do not keep them in the universities. Otherwise, you will neither have Hindi nor any other regional language. The question will again be. Have you got the professors? I think you have not. As far as I can say about teachers who are teaching medicine, they do not know Hindi and they will not take the trouble of learning Hindi. If they have to go to Russia on scholarship, in six months they will earn Russian. If they have to go to France, they will learn French in six months. Because they live in India, they do not care for your resolutions They know you are not determined to act You cannot be a deterrent to them. If you keep a deterrent, then only it is possible to do it.

Then, I will talk about neighbourhood schools, but before I talk about it, may I say this? Some day you are going to have neighbourhood universities. You talk today about neighbourhood schools because you have failed to give the standard that is needed for primary education You have failed to provide them with teachers of a better status with higher emoluments You have failed to provide them with school fees. You have failed to provide them with books There they sit under conditions where the personality of the boy cannot be developed. That is why those persons who can afford it send them to such institutions. The answer should have been, raise your primary school level to the level of the public school, so that people need not unnecessarily spend their money. But what we are

[Dr. M. M. S. Siddhu.]

thinking to do is this. We cannot build something better. So, why not pull it down? Is that the answer? I have seen the recommendations and I have studied them. Have a competition at the village level. Have a competition at the rural level. Pick out the boy of talent and send him to the public school. Let the Union Government bear the full expenditure of that talented boy, so that he will be turned into something better. You will find that the boys of vested interests will be lagging behind. Do we think of that? No. We think in terms of pulling down everything rather than creating something better, because we cannot create something better. Is that the answer? You talk of text-books. What has happened to the text-books which have stood the test of time for twenty years or thirty years? Persons from U.P. know that Chakravarti's or Basu's algebra books were there. What has happened to those books? These books have stood the test of time. Even today the teachers refer to them and they have reverence, but they are not text-books. Why? It is because vested interests have been developed in text-books. I am sure the Education Minister will have to be a strong man if he has to prevent the sqandering away of Rs. 18 crores, which are being given for the translation of books, because it will be difficult to go on translating books. Why do we not pick up the books which have stood the test of time and adapt them in the regional language? There will be no difficulty.

As time is running out and as you have cautioned me, all that I can say is this is not the time to discuss what should be the medium of instruction. This is not the time to think what is the link language. Those things will develop. This is the time for you to act. If you falter, the nation will not spare you. If you do not act, the nation will say that when the trial was there this Parliament and this leadership failed to give the lead to the nation.

Thank you

THE DEPUTY CHAIRMAN: Still there are some more names, but I am calling the Minister of Education to reply.

SHRI M. C. SHAH (Gujarat): Madam Deputy Chairman . . .

THE DEPUTY CHAIRMAN: Time has run out. If everyone had kept to his time, we could have accommodated more.

SHRI M. C. SHAH: Madam, with your permission, I would like to request . . .

THE DEPUTY CHAIRMAN: Let him reply. There are other names also.

SHRI M. C. SHAH: No, no. I am not making any speech. I only want him to clarify two points during his reply. One is, if the UPSC is to conduct the test in different regional languages, how is a common standard going to be maintained when different persons are examining in different languages? Secondly, if the UPSC is to select all-India personnel who pass in different regional languages, how will these people function in different States?

THE MINISTER OF EDUCATION (DR. TRIGUNA SEN): Madam Deputy Chairman, the Government has not taken any decision on the recommendations of this Report, excepting on one issue, *i.e.*, the medium of instruction which should be the regional language, and we have accepted this in principle. Other decisions we will take after hearing the Members. We are noting down their opinions. So, I cannot answer his questions now.

Madam, first of all, let me, on behalf of the Ministry of Education and myself, thank the hon. Members who have participated in this educative and stimulating discussion which has three special aspects that deserve notice. One is, this is the first occasion when Parliament is discussing the Report of a Commission on Education, because the Report of the University Education

Commission, popularly known as the Radhakrishnan Commission, of 1949, or the Report of the Secondary Education Commission of 1952 were never discussed in Parliament. No. 2., this is, again, the first time when education is being discussed comprehensively at all stages and in all sectors. Thirdly, this is also the first time when the concept of a national policy on education has been accepted and the discussions have been directed mainly towards its formulation.

For having made this possible, I take this opportunity to place on record our grateful thanks to my predecessor, Shri M. C. Chagla, who felt the urgent need to define a comprehensive national policy on education and appointed an Education Commission to advise Government on this subject. I must also place on record my gratitude to the State Governments who offered every co-operation to the Education Commission and who are now offering equally enthusiastic co-operation to the Ministry of Education in implementing its recommendations. I feel specially grateful to the Committee of Members of Parliament and particularly to my esteemed friend, Shri Ganga Sharan Sinha, who at my request discussed the main recommendations of the Education Commission for days together and prepared a draft statement of national policy on education for the consideration of the Government. Their labours have given a direction to the discussion of the problems in this House and in this country as a whole. It is true that there were differences in the Committee on some important issues like the language policy, the neighbourhood schools or participation by teachers in elections. But we should not underemphasize the fact that they have agreed on every other issue and that their proposals if vigorously implemented, can change the face of education in the country.

The discussions in this House as well as outside, Madam, have largely centred on language policy, and a big nation-wide debate is now in progress regarding the decision of Government to adopt regional languages as media of education at the university stage. It is natural because we have divergent views on this subject. I shall not, however, deal with the language problem particularly because Prof. Sher Singh has already dealt with it in detail and particularly because the Government decision on this problem which is now being formulated will be announced on the 15th of August. I request the hon. Members to bear with me till then. One thing is certain that the Government is determined to develop all languages outlined in Schedule VIII of the Constitution. I lay stress on this because many Members expressed their doubts that the Urdu language may not be developed.

Madam, some Members have congratulated me for having taken this historic decision, while other condemned me as a demon disintegrating the whole of India. I do not deserve this praise nor this accusation, because it was not I who thought that to raise the standard of education and to give greater scope for acquisition of knowledge it was absolutely necessary to teach a child in his mother tongue. Madam, I was born in a State which is know as East Pakistan. Many young men gave their lives; their motto was: we do not care for our lives but we do for our tongue. I was educated in a State where I was told and I read that Swami Vivekananda, Shri Arobindo, Ishwar Chandra Vidyasagar, National Professor Satyen Bose, all pleaded time and again that to bring out the creative genius in a child it is absolutely necessary to teach a child in his mother tongue. I read about the movement in Bombay with Prof. Dandekar and, Madam, I explained in my statement at the beginning that for the last hundred years or more people of different States in India were agitating to have vernacular as the medium of education. Government took that into consideration, and also the Reports of all Commissions—the Radhakrishnan Commission Report, the Education Commission Report—

[Dr. Triguna Sen.]

as well as the report that we are discussing today of the Committee of Members of Parliament and the Conference of Education Ministers of all the States that I convened some months back, all recommended that the medium of instruction at all stages should be the regional language. The Government taking into consideration all these reports and opinions decided that the regional language should be the medium of instruction. Details, as I have said, the Government will declare on the 15th of August

Several Members have criticised this decision, this policy of imparting higher education in regional languages on the ground that this would lead to the lowering of educational standards and to the weakening of national integration. I would like to say with all the emphasis at my command that I for one would never advocate a policy which would lower standards or lead to any kind of disintegration of our national unity. On the other hand this policy is designed to raise the standard of education and give greater scope to acquisition of knowledge and its application to all citizens of the Indian Union. For the last hundred years and more, as I have explained, we have been paying lip service to the principle of imparting education in Indian languages, but very little was done to implement this policy. What is now intended is that we should substantiate a policy already agreed upon after full consideration and on the best educational grounds.

Madam Vice-Chairman, our language policy provides for adequate knowledge of the link language, Hindi, and the important library language, English, and it is proposed to strengthen the facilities of learning these languages. If we improve language teaching by application of modern methods and techniques, the comprehension of languages on the part of a student can be immensely improved, and I see no danger whatsoever to the continuance of our links through language communication both nationally and internationally. On the other hand I am convinced as perhaps all the Members are convinced that it would be a great gain to the easy and creative acquisition of knowledge through one's own language. I am sure this proposal will find overwhelming support in all sections of the people and in all parts of the country.

While this anxiety over the language problem, as I said, is understandable, we should not commit the mistake of equating the language policy with the national policy on education. Language is, after all, a tool of education and to secure national development on proper lines, we must immediately begin to tackle the basic issues of education.

3 P.M.

Now, what are these basic issues in education as recommended by the Education Commission's Report or in the Report of the Committee of Members of Parliament on Education? Firstly, the school should accept the responsibility of inculcating the love of the motherland in the hearts of the rising generation. Madam Deputy Chairman, you will agree—and I feel sorry about it but it is true—that the first casualty of independence has been patriotism. We must, therefore, through education inculcate in the minds of the children love for the motherland. Every child must be introduced to the great traditions of our past and must be made to take proper pride in them. We must also introduce the type of society that we desire to build up with all our plans and programmes of national development so that he develops a faith and confidence in the great future which we can carve out for ourselves. Social and national service should be an integral part of education. The Committee of Members of Parliament has laid great stress on this; it should be at all stages And I agree that the ambitious plans of national development which we formulate from time to time must be implemented and can be implemented only if every citizen develops a deep commitment to national development.

Madam, the second and equally important issue is to initiate and maintain the feed-back process. The standard in education and its contribution to national development depend, in the last analysis, on the quality of the teachers. This was emphasised by Jairamdas Daulatramji and by Shrimati Shyam Kumari Khan, and I fully agree with them. We must take steps to see that to spread education properly, the best young men and women who come out of schools and colleges every year will join the teaching profession. The Committee of Members of Parliament has recommended that we must take vigorous steps to improve the status, remuneration and professional training of the teachers. It will, therefore, have to be taken seriously, and they will have to be provided with adequate opportunities for professional advancement and satisfactory conditions of work and service.

The third basic issue which has been recommended is to relate education to productivity. In a traditional society, Madam, you will agree that the educated man is a gentleman of leisure and culture, and does not usually work with his hands. On the other hand, the average producer, whether in agriculture or in industry, receives no formal education of any type. This divorce between productive work and education has to come to an end. For this purpose, it has been recommended that work experience must become an integral part of all education at the school stage. Secondary education will have to be vocation-based, and at the university stage, they have recommended that emphasis will have to be laid on the development of professional education in general, agriculture and industrial education in particular.

I agree broadly with Shri Krishan Kant when he emphasised the need to improve and expand science education at all stages to promote scientific research and to relate it closely to the development of agriculture and industry. I also agree that we should have an annual report of the progress of science in our country for the information of the Members of Parliament.

The fourth basic issue which has been recommended is to provide adequate student service. The minimum that we should do is to provide free primary education immediately and also to provide free books and writing materials at the primary stage at least to all the poor and needy children and particularly to girls. In the secondary schools and colleges we must build up good text-book libraries so that every student has adequate access to all text-books. There is also need to develop a big programme of games and sports, emphasis being placed on those activities which cost less but provide vigorous physical exercises.

The fifth basic issue that they have recommended is to improve the standards of teaching and research in higher education. At the university stage the standards are really international. India should be able not only to cope with the explosion of knowledge that is now going on in the world but also to make her own significant contributions to it. For this purpose, the recommendation is that our universities have to make an intensive effort to develop themselves into autonomous communities of teachers and students, entirely and devotedly engaged in the pursuit of knowledge and learning. Each university, they have said, should strive to develop some centres of excellence within itself through a concentration of resources, both human and material, and raise them ultimately to the status of centres of advanced studies. In addition, they have rightly recommended that the University Grants Commission will have to strive, where the necessary potential is available, to create centres of advanced studies in related disciplines which strengthen and support one another. This radical improvement, I agree with the Members, in the quality of our system of higher education is the very fountain

[Dr. Triguna Sen.]

head of regeneration and improvement of the educational system as a whole.

All these five basic issues relate to two aspects of educational reconstruction, firstly, the transformation of the educational system to suit the life, needs and aspirations of the people and secondly, to continually raising of educational standards. This does not, however, imply any under-emphasis on expansion which must go on side by side. We must liquidate also adult illiteracy in a phased programme and especially concentrate on the age group 15 to 25.

Several of my sisters in this House have emphasised the need to develop free pre-primary education, to spread education amongst the girls and to promote the education of handicapped children. I fully agree with them. We have also to make special efforts to ameliorate the social and economic conditions of the Scheduled Tribes and Scheduled Castes and to spread education in their midst.

All these recommendations, as I have said, and particularly these five issues which the Education Commission have recommended and on which the Committee of Members of Parliament has laid more stress, I think the Government will have no hesitation or objection to accept.

Now, this is the broad outline of the programme of educational reconstruction which the Government also have in view. And the Government is convinced that such a programme can only be put on the ground if a national policy on education is formulated and implemented vigorously over a fairly long period of time. The past history of this practice was ably summed up by Shri Ganga Basu. I shall, therefore, not repeat it. But I shall briefly describe for the information of the hon. Members the procedure which the Government propose to adopt for the issue of such a resolution on education.

The report of the Education Commission obviously provides the basis for its preparation, and after duly examining its main recommendations, as I have enunciated, the Committee of Members of Parliament on Education has prepared a draft statement which we have also discussed here. We have already sent the statement to the State Governments for their suggestions and I shall be discussing it with all the State Education Ministers whom I am meeting informally on the 21st of this month.

The problem will also be examined in the next session of the Central Advisory Board of Education which will be held at Delhi on the 22nd and the 23rd instant, and in the Conference of Vice-Chancellors who are also meeting shortly. Now that the statement has been made public, we also expect that it will be discussed at length in the press by teacher's organisations and by all members of the public interested in education. Above all, the discussions in both Houses of Parliament and the valuable suggestions made by the hon. Members will be of immense use to us in formulating the decision of the Government. I hope it will be possible for the Government to issue its resolution on the national policy on education before the end of the year.

Madam, several hon. Members have laid emphasis on implementation. I fully agree with them that mere formation of a national policy on education, however important, will not serve the purpose if it remains unimplemented. The Education Commission has pointed out—and I agree—that there is a wide and distressing gulf between thought and activity. Madam, in ancient days we had developed a philosophy which could last us till the end of the world. Unfortunately, in the post independence period we have developed plans and programmes which will last us for a century or even more. And in many places we really cut a very poor figure when it comes to implementation.

I do not like to talk and, as you have seen, I cannot talk well. But I have been trained as an Engineer who believes in doing things. To me, therefore, the message of our recent educational history is very clear. I can write it in three words, implement, implement and implement. And to this process I seek your best wishes and blessings so that, we can implement the recommendations which the Government will accept. Thank you.

श्री सुन्दर सिंह भंडारी (राजस्थान) : मैं शिक्षा मंत्री जी से एक निवेदन करना चाहता हूं । जैसा उन्होंने अपने जवाब में बताया, उन्होंने स्वीकार किया है कि दुर्भाग्य से स्वतंत्रता के बाद राष्ट्र-भक्ति पहले शिकार हुई है । मैं उनसे यही निवेदन करना चाहता हूं कि इस शिक्षा की नीती का गठन करते समय, सारे विचारों का ध्यान रखते समय, इस राष्ट्र-भक्ति की भावना को बल मिले, इसका वे दृढ़ता से अनुसरण करें ।

THE DEPUTY CHAIRMAN: Any answer?

DR. TRIGUNA SEN: No, Madam.

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA (Andhra Pradesh): Madam, I want to put a question.

THE DEPUTY CHAIRMAN: I do not think we should prolong the discussion. Anyway, you can ask your question. But be very brief.

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA: You know, Madam, I never ask questions. The question is suppose after the finalisation of the Central policy on education, if any States are against it, what is the remedy with the Centre? It has been happening in the past. I want to know what we will do.

DR. TRIGUNA SEN: Madam, as I explained, I expect all co-operation from the State Government and I have and I will always try for that.

THE DEPUTY CHAIRMAN: Anyone else? Then next item on the Order Paper. The Tea (Amendment) Bill, 1967. Mr. Dinesh Singh please move.

THE TEA (AMENDMENT) BILL, 1967

THE DEPUTY MINISTER IN THE MINISTRY OF COMMERCE (SHRI M. SHAFI QURESHI): Madam, I beg to move:

> "That the Bill further to amend the Tea Act, 1953, as passed by the Lok Sabha, be taken into consideration."

Madam, the Tea Board was set up under the Tea Act, 1953. The representatives of the Governments of the principal tea-growing States and of different facets of the tea industry in India constitute the Board, which has also the privilege of having Members of Parliament as its members.

Apart from promoting co-operative efforts among the small growers and manufacturers of tea and assisting and encouraging scientific and technological research connected with tea, the Tea Board renders technical advice whenever it is sought for improving the quality and quantity of tea produced in the country. A sum of about Rs. 11 lakhs was contributed by the Tea Board for research on tea during 1966-67. It collects and publishes statistics in regard to production, marketing and export of tea. It renders assistance to the industry for purpose of increasing production, both qualitative and quantitative, and by advancing long-term loans to enable the plantations to undertake extensions and replantings. It also supplies machinery and equipment required for processing the tea on a hire-purchase basis. Loans are given for financing irrigation projects and for procurement of irrigation equipment. In the field of labour welfare, the Tea Board contributes substantial sums (about Rs. 10 lakhs in 1966-67) for providing amenities to the workers in the tea gardens.

The importance of tea in India's economy lies mostly in its exports and the foreign exchange realised